2024 आई. एन. एस. सी. 448 सूचित करने योग्य

भारत के उच्चतम न्यायालय में

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार

**वर्ष 2023 का आपराधिक अपील सं. 3925**

सुनीता देवी .....अपीलकर्ता(ओं)

बनाम

बिहार राज्य और अन्य .....उत्तरदाता (गण)

**वर्ष 2023 का आपराधिक आवेदन संख्या 3926-3927**

**आपराधिक आवेदन संख्या- 2023 का 3925**

निष्पक्ष सुनवाई की अवधारणा-- दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-धारा 173, 207 ए, 251 ए, 207, 208, 209, 338, 227, 228, 230, 231, 233, 309, 465, 386, 235, 360, 354-- गवाह संरक्षण योजना, 2018- न्यायालयों के लिए वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के नियम, 2020- नियम 6, 8, 11--- अपराधियों की परिवीक्षा अधिनियम, 1958-धारा 3, 4, 6- पटना उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पारित किए गए पुनर्विचार आदेश के विरुद्ध मुखबिर और न्यायिक अधिकारी द्वारा दायर अलग-अलग अपीलें, जिसमें मुकदमे को स्थापित करने का निर्देश दिया गया है। न्यायालय ने न्यायिक अधिकारी के खिलाफ कुछ टिप्पणियाँ करते हुए, मुकदमे के संचालन में उनके दृष्टिकोण को अस्वीकार करते हुए पुनः मुकदमा चलाने का आदेश दिया।

अधिनियमित किया गया- आरोपों के निर्धारण सहित मुकदमे के प्रत्येक चरण में, अभियुक्त को उचित अवसर और सुनवाई से लगातार वंचित रखा गया-अभियुक्त अपने वकील से

परामर्श करने में सक्षम नहीं था और उसे प्रतियां भी नहीं दी गईं, हालांकि उसके वकील को आरोप तय करने से पहले ही ये प्रतियां प्राप्त हो गई थी- अभियुक्त द्वारा दस्तावेजों को प्राप्त करना पर्याप्त अनुपालन नही होगा, जब तक कि अभियुक्त को उनका अवलोकन करने और उसके बाद परामर्श करने के लिए पर्याप्त समय न दिया जाए- न तो गवाह संरक्षण योजना के प्रावधानों को लागू पालन किया गया है । अभियुक्त को केवल न्यायालय की कार्यवाही दिखाई गई और उसके लिए सब कुछ स्पष्ट हो गया--यह उचित ही है कि अभियुक्त को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाए, न कि वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से उसकी उपस्थिति दर्ज कराई जाए, जो कि अपवाद है। अपने विवेक का प्रयोग करते हुए, न्यायालय को किसी भी प्रकार के दुरुपयोग की संभावना को खारिज करना होगा - एक ही दिन में सुनावाई शुरु हुई और समाप्त हो गई-प्रत्येक सुनवाई सत्य की ओर एक यात्रा है और पीठासीन अधिकारी से अभियोजन पक्ष और बचाव पक्ष के मन में एक संतुलित वातावरण बनाने की अपेक्षा की जाती है-आधे घंटे के भीतर 59 पैराग्राफ वाले 27 पृष्ठों में निर्णय सुनाना मानवीय रुप से असंभव है-बचाव पक्ष के अधिवक्ता न्यायालय के विरुद्ध नही लड़ सकता। न्यायालय को ही संतुलित दृष्टिकोण अपनाना होता है- जब आरोप बहुत गंभीर होते हैं, तो न्यायालयों को अपने गंभीर कर्तव्य का निर्वहन करने में अधिक सतर्क रहना चाहिए-आपराधिक कानून की प्रतिकुल प्रणाली में, जिसका भारत में पालन किया जा रहा है, जब किसी अभियुक्त पर राज्य की ओर से मुकदमा चलाया जाता है, तो पीड़ित को नजरअंदाज नही किया जा सकता-निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 का एक हिस्सा है । मुकदमा शुरु करने से पहले ही मामले को पूर्व निर्णय कर लिया है, अन्यथा ऐसा मुकदमा एक खाली औपचारिकता बन जाएगा-न्याय सुनिश्चित करने के लिए बनाए गए नियमों और प्रक्रियाओ का पालन करने में न्यायालय उदासीन नही हो सकता है-भारत सरकार को एक व्यापक सजा नीति शुरु करने की व्यवहार्यता पर एक हलफनामा दायर करने के निर्देश के साथ अपील खारिज की जाती है।

2024 आई. एन. एस. सी. 448 सूचित करने योग्य

भारत के उच्चतम न्यायालय में

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार

**वर्ष 2023 का आपराधिक अपील सं. 3925**

सुनीता देवी .....अपीलकर्ता(ओं)

बनाम

बिहार राज्य और अन्य .....उत्तरदाता (गण)

**वर्ष 2023 का आपराधिक आवेदन संख्या 3926-3927**

**आपराधिक आवेदन संख्या- 2023 का 3925**

**निर्णय**

**एम. एम. सुंदरेश, जे./ न्यायमूर्ति**

1. पटना उच्च न्यायालय की खंड पीठ द्वारा पारित प्रेषण के आदेश के खिलाफ सूचना देने वाले द्वारा 2023 की आपराधिक अपील संख्या 3926-3937 दायर की गई है, जिसमें विशेष न्यायाधीश के खिलाफ कुछ टिप्पणियां करते हुए, मुकदमे के संचालन में उनके दृष्टिकोण को अस्वीकार करते हुए, ट्रायल कोर्ट विचारण अदालत को डी नोवो ट्रायल करने का निर्देश दिया गया है। 2023 की आपराधिक अपील सं. 3926-3927 विद्वान विशेष न्यायाधीश द्वारा दायर की गई है जिन्होंने मुकदमा चलाया और उसके बाद फैसला सुनाया। 2023 की आपराधिक अपील सं. 3925 उसी विद्वान न्यायाधीश द्वारा दायर की गई है, जो उच्च न्यायालय द्वारा एक बार फिर प्रेषण के

आदेश में की गई टिप्पणियों से व्यथित है, पटना उच्च न्यायालय के माननीय मुख्य न्यायाधीश से इस बात पर विचार करने का अनुरोध किया है कि क्या न्यायिक अधिकारी को राज्य न्यायिक अकादमी में नए प्रशिक्षण के लिए भेजते समय सत्र परीक्षण आयोजित करने का कार्य सौंपा जाना चाहिए, जिसके दूरगामी परिणाम हैं।

2. अपीलार्थी की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री विकास सिंह और उत्तरदाताओं की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सी. यू. सिंह को सुना गया। हमने पक्षों द्वारा लिखित प्रस्तुतियों के साथ दाखिल किए गए दस्तावेजों का अध्ययन किया है।

3. योग्यता के आधार पर प्रस्तुतियों में जाने से पहले, हम पहले मुकदमे के संचालन में कानूनी स्थिति को नियंत्रित करने वाले प्रावधानों पर विचार करेंगे।

**<u>वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग</u>**

**<u>न्यायालयों के लिए वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के नियम, 2020 का नियम 6</u>**

***"6. वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग द्वारा उपस्थिति, साक्ष्य और प्रस्तुत करने के लिए आवेदनः***

6.1 कार्यवाही या गवाह का कोई भी पक्ष, सिवाय और जहां अदालत के कहने पर कार्यवाही शुरू की जाती है, वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के लिए अनुरोध किया जा सकता है। वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग कार्यवाही की मांग करने वाला एक पक्ष या गवाह अनुसूची II में निर्धारित प्रपत्र में अनुरोध करके ऐसा करेगा।

6.2 वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के लिए अनुरोध करने के किसी भी प्रस्ताव पर पहले अन्य पक्ष या कार्यवाही के पक्षों के साथ चर्चा की जानी चाहिए, सिवाय इसके कि जहां यह संभव या अनुचित न हो, उदाहरण के लिए तत्काल आवेदन जैसे मामलों में।

6.3 इस तरह के अनुरोध की प्राप्ति पर और सभी संबंधित व्यक्तियों को सुनने पर, न्यायालय यह सुनिश्चित करने के बाद एक उचित आदेश पारित करेगा कि

आवेदन निष्पक्ष सुनवाई में बाधा डालने या कार्यवाही में देरी करने के इरादे से दायर नहीं किया गया है।

6.4 वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के लिए अनुरोध की अनुमति देते समय, न्यायालय वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग आयोजित करने का कार्यक्रम भी तय कर सकता है।

6.5 यदि मौखिक प्रस्तुतियाँ करने के लिए वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग कार्यक्रम बुलाया जाता है, तो आदेश में अधिवक्ता या पक्ष को व्यक्तिगत रूप से संबंधित न्यायालय के आधिकारिक ईमेल आईडी पर लिखित तर्क और उदाहरण, यदि कोई हो, अग्रिम रूप से प्रस्तुत करने की आवश्यकता हो सकती है।

6.6 लागत, यदि भुगतान करने का निर्देश दिया जाता है, तो निर्धारित समय के भीतर जमा किया जाएगा, जिस तारीख को वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से कार्यवाही बुलाने का आदेश प्राप्त होता है।

**न्यायालयों के लिए वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के नियम, 2020 का नियम 8**

***"8. व्यक्तियों की जाँच:-***

8.3 जहाँ पूछताछ किए जा रहे व्यक्ति या मुकदमा चलाए जाने वाले अभियुक्त हिरासत में हैं, वहाँ बयान या, जैसा भी मामला हो, गवाही वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से दर्ज की जा सकती है। न्यायालय विचाराधीन कैदी को वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग से पहले, दौरान और बाद में अपने वकील के साथ गोपनीयता में परामर्श करने का पर्याप्त अवसर प्रदान करेगा।

**न्यायालयों के लिए वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग नियम, 2020 का नियम 11**

***"11. न्यायिक रिमांड, आरोप तय करना, अभियुक्तों की जाँच और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के तहत कार्यवाही।***

11.1 न्यायालय, अपने विवेकाधिकार पर, किसी अभियुक्त को हिरासत में लेने, वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से सीआरपीसी '33' प्रक्रिया संहिता के तहत आपराधिक मुकदमे में आरोप तय करने को अधिकृत कर सकता है। हालांकि, आम तौर पर पहली बार में न्यायिक रिमांड या पुलिस रिमांड वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग

के माध्यम से और लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए असाधारण परिस्थितियों को छोड़कर नहीं दी जाएगी।

11.2 अदालत, असाधारण परिस्थितियों में, लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए, किसी गवाह या आरोपी से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के तहत पूछताछ कर सकती है या वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत आरोपी का बयान दर्ज कर सकती है, यह सुनिश्चित करने के लिए सभी उचित सावधानियों का पालन करते हुए कि गवाह या आरोपी किसी भी प्रकार के जबरदस्ती, धमकी या अनुचित प्रभाव से मुक्त हो। न्यायालय साक्ष्य अधिनियम की धारा 26 का अनुपालन सुनिश्चित करेगा।

4. पटना उच्च न्यायालय ने भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 225 और 227 के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए तैयार नियमों और न्यायालयों के लिए वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के उपयोग से संबंधित प्रक्रियाएं। यह राज्य सरकार की सहमति से किया गया था। “न्यायालयों के लिए वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के नियम, 2020 "वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग को नियंत्रित करने वाले सामान्य सिद्धांतों को चित्रित करते हैं। नियम 6 में वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के लिए आवेदन का प्रावधान है। जब ऐसा आवेदन किया जाता है, तो इसे दूसरे पक्ष को दिया जाना चाहिए और उसके बाद अदालत द्वारा एक उचित आदेश दिया जाना चाहिए जो अनुमोदन देने के लिए अपनी संतुष्टि का संकेत देता है। नियम 8 के अनुसार, जब परीक्षण किए जा रहे व्यक्ति की गवाही वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से दर्ज की जानी है, तो अदालत विचाराधीन कैदी को विभिन्न चरणों में-पहले, दौरान और बाद में-अपने वकील के साथ गोपनीयता में परामर्श करने का पर्याप्त अवसर प्रदान करेगी। नियम 11 के तहत, पहली बार न्यायिक रिमांड या पुलिस रिमांड के समय वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से किसी आरोपी की उपस्थिति सुनिश्चित करने का कार्य, निश्चित रूप से कोई मामला नहीं है और इसलिए, इसका उपयोग केवल अपवादात्मक परिस्थितियों में ही किया जाना चाहिए क्योंकि कारण

लिखित रूप में दर्ज किए जाने चाहिए। दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (इसके बाद "**दंड प्रक्रिया संहिता, 1973**" के रूप में संदर्भित) की धारा 313 के तहत एक आरोपी के बयान की रिकॉर्डिंग का मामला भी ऐसा ही है, जिस मामले में अदालत की ओर से यह सुनिश्चित करना अनिवार्य है कि आरोपी किसी भी प्रकार के जबरदस्ती, धमकी या अनुचित प्रभाव से मुक्त है।

5. उपरोक्त नियमों को एक साथ पढ़ने पर, यह केवल उचित है कि अभियुक्त को उसके 5 को चिह्नित करने के बजाय उसकी उपस्थिति वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से अदालत के समक्ष पेश किया जाना चाहिए। बाद वाला एक अपवाद है। अपने दिमाग को लागू करते समय, न्यायालय को किसी भी दुरुपयोग की संभावना को खारिज करना होगा।

**<u>साक्षी सुरक्षा योजना, 2018</u>**

6. आपराधिक कानून को लागू करते हुए न्याय प्रशासन के हित में गवाह संरक्षण योजना, 2018 शुरू की गई है। इसका उद्देश्य ऐसी स्थिति का ध्यान रखना है जहां गवाहों को डर या पक्षपात से अभियोजन पक्ष के मामले को पूरी तरह से छोड़कर अदालत के समक्ष गवाही देने के लिए कहा जाता है। इस योजना में एक सक्षम प्राधिकारी का प्रावधान है जो एक जिला और सत्र न्यायाधीश की अध्यक्षता वाली स्थायी समिति है, जिसमें जिले में पुलिस प्रमुख एक सदस्य के रूप में और अभियोजन के प्रमुख इसके सदस्य सचिव के रूप में होते हैं। एक गवाह सक्षम प्राधिकारी के समक्ष सुरक्षा मांगने के लिए स्वतंत्र है। पुलिस प्रमुख से अपेक्षा की जाती है कि वह सक्षम प्राधिकारी के समक्ष "खतरे का विश्लेषण रिपोर्ट" प्रस्तुत करे। इस योजना में विस्तार से बताया गया है कि इस तरह का आवेदन दायर होने के बाद क्या कार्रवाई की जानी है।

**निष्पक्ष परीक्षण**

7. एक निष्पक्ष परीक्षण में सभी हितधारकों के लिए पर्याप्त अवसरों के साथ प्रक्रिया का उचित अनुपालन शामिल होगा। इस तरह के प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपायों और अनुपालन को न्यायालय द्वारा ध्यान में रखा जाना चाहिए, क्योंकि कोई भी विचलन या तो किसी मामले में अभियोजन या बचाव पक्ष को प्रभावित कर सकता है। आपराधिक कानून की एक प्रतिकूल प्रणाली में, जिसका भारत में पालन किया जा रहा है, जब किसी आरोपी पर राज्य की ओर से मुकदमा चलाया जाता है, तो पीड़ित के हित को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है।अपराध को सामाजिक मूल्यों के खिलाफ माना जाता है और इसलिए, कोई भी अपराध अभियुक्त द्वारा एक विचलित करने वाला कार्य होगा।

8. प्रत्येक परीक्षण सत्य की ओर एक यात्रा है। प्रक्रियात्मक कानून को अपने उपकरण के रूप में उपयोग करते हुए सच्चाई की खोज करना न्यायालय का प्राथमिक कर्तव्य है। इस तरह के प्रक्रियात्मक कानून का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हो सकता है जो अभियुक्त और पीड़ित दोनों को कुछ अपरिहार्य अधिकारों का विस्तार कर सकता है। प्रक्रियात्मक कानून का पालन न करने से न्याय को पटरी से न उतरने दिया जा सकता है। जो कोई भी अनुचित मुकदमे की शिकायत करता है, उसका कर्तव्य है कि वह न्यायालय को संतुष्ट करे कि वह उससे पूर्वाग्रह से ग्रस्त है। इसका मतलब यह नहीं है कि न्यायालय न्याय सुनिश्चित करने के लिए बनाए गए नियमों और प्रक्रियाओं का पालन करने में लापरवाही बरत सकता है।

9. एक निष्पक्ष मुकदमा आपराधिक न्यायशास्त्र का दिल और आत्मा है। लोकतंत्र का सिद्धांत निष्पक्ष सुनवाई में निहित है। यह न केवल एक वैधानिक अधिकार है, बल्कि एक मानव अधिकार भी है, जिसका उल्लंघन तब किया जाएगा जब क़ानून के

तहत प्रदान किए गए सुरक्षा उपायों का पालन नहीं किया जाएगा। निष्पक्ष सुनवाई की अनुपस्थिति भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 14 और 21 के तहत गारंटीकृत मौलिक अधिकारों को गंभीर रूप से बाधित और उल्लंघन करेगी। यह देखना महत्वपूर्ण है कि न्याय की विफलता का अस्तित्व है, जो स्पष्ट रूप से एक तथ्य है। केवल उल्लंघन स्वयं मुकदमे को दूषित नहीं करेगा, विशेष रूप से जब किसी क़ानून में प्रदर्शित सार की मात्रा न्यूनतम हो।

10. निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 21 का एक हिस्सा है। एक मुकदमा वास्तविक होना चाहिए और इसलिए, केवल दिखावा नहीं होना चाहिए। न्यायालय के निर्णय पर कभी भी यह धारणा नहीं होगी कि उसने मुकदमा शुरू करने से पहले ही किसी मामले का पूर्वनिर्धारण और पूर्व निर्णय कर लिया है, अन्यथा ऐसा मुकदमा एक खाली औपचारिकता बन जाएगा।

**पूर्ववर्ती**

**जे. जयललीता बनाम कर्नाटक राज्य, (2014) 2 एससीसी 401**

**"28. निष्पक्ष सुनवाई आपराधिक प्रक्रिया का मुख्य उद्देश्य है और इस तरह की निष्पक्षता को किसी भी तरह से बाधित या धमकी नहीं दी जानी चाहिए। निष्पक्ष सुनवाई में अभियुक्त, पीड़ित और समाज के हित शामिल होते हैं। इस प्रकार, प्रत्येक अभियुक्त को जीवन के अधिकार और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की भावना से निष्पक्ष सुनवाई की जानी चाहिए और अभियुक्त को अपराधी में आरोपित आरोप पर स्वतंत्र और निष्पक्ष, न्यायसंगत और उचित सुनवाई मिलनी चाहिए।** सार्वजनिक अधिकारों और कर्तव्यों का कोई भी अतिक्रमण या उल्लंघन समग्र रूप से समुदाय पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है और यह सामान्य रूप से समाज के लिए हानिकारक हो जाता है। सभी परिस्थितियों में, न्यायालयों का कर्तव्य है कि वे न्याय के प्रशासन में जनता का विश्वास बनाए रखें और ऐसा कर्तव्य "कानून की महिमा" को सही ठहराना और बनाए रखना है और अदालतें

आपराधिक कार्यवाही के संबंध में होने वाले कष्टप्रद या दमनकारी आचरण से आंखें नहीं मूंद सकती हैं।

29. **निष्पक्ष सुनवाई से इनकार करना आरोपी के साथ उतना ही अन्याय है जितना कि पीड़ित और समाज के साथ। इसके लिए अनिवार्य रूप से एक निष्पक्ष न्यायाधीश, एक निष्पक्ष अभियोजक और न्यायिक शांति के माहौल के समक्ष मुकदमे की आवश्यकता होती है। चूँकि मुकदमे का उद्देश्य न्याय दिलाना और दोषी को दोषी ठहराना और निर्दोष की रक्षा करना है, इसलिए परीक्षण में सच्चाई की खोज होनी चाहिए न कि तकनीकी बातों पर और ऐसे नियमों के तहत संचालित किया जाना चाहिए जो निर्दोष की रक्षा करें और दोषी को दंडित करें। न्याय न केवल किया जाना चाहिए बल्कि ऐसा प्रतीत होना चाहिए कि किया गया है। इसलिए स्वतंत्र और निष्पक्ष सुनवाई संविधान के अनुच्छेद 21 की अनिवार्य शर्त है। निष्पक्ष सुनवाई प्राप्त करने का अधिकार केवल एक बुनियादी मौलिक अधिकार नहीं है, लेकिन एक मानव अधिकार भी। इसलिए, निष्पक्ष सुनवाई में कोई भी बाधा संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन हो सकती है।** अभियोजन एजेंसी या राज्य तंत्र की सुस्ती के कारण परीक्षण को अनिश्चित काल तक बढ़ाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और यही मुकदमे के समापन के लिए समय सीमा निर्धारित करने का कारण है।

(जोर दिया गया)

**रतिराम बनाम एम. पी. राज्य, (2012) 4 एस. सी. सी. 516**

**"39.** हमारे द्वारा प्रस्तुत प्रश्न मूल रूप से गैर-से संबंधित है-**इस तरह के प्रतिबंध का अनुपालन इस परीक्षण का सार यह है कि क्या यह ऐसा ठोस निर्णय है जो किसी भी छुटकारे से परे परीक्षण के भाग्य को बाधित करता है या उस मामले के लिए यह ऐसी चूक है या यह ऐसा कार्य है जो निष्पक्ष परीक्षण की मूल अवधारणा को विफल कर देता है। मौलिक रूप से, एक निष्पक्ष और निष्पक्ष परीक्षण का एक पवित्र उद्देश्य होता है। इसका एक स्पष्ट उद्देश्य है कि अभियुक्त को पूर्वाग्रह से ग्रस्त नहीं होना चाहिए। एक निष्पक्ष सुनवाई को**

**इस तरह से संचालित करने की आवश्यकता है जो अन्याय, पूर्वाग्रह, बेईमानी और पक्षपात को पूरी तरह से बहिष्कृत कर दे।**

**40. *कल्याणी भास्कर बनाम एम. एस. संपूर्णम* [(2007) 2 एस. सी. सी. 258: (2007) 1 एस. सी. सी. (आपराधिक) 577] में यह निर्धारित किया गया है कि "निष्पक्ष सुनवाई" में अभियुक्त को निर्दोष साबित करने के लिए कानून द्वारा अनुमत निष्पक्ष और उचित अवसर शामिल हैं और इसलिए, बचाव पक्ष के समर्थन में साक्ष्य प्रस्तुत करना एक मूल्यवान अधिकार है और उस अधिकार से इनकार करने का अर्थ है निष्पक्ष सुनवाई से इनकार करना। यह आवश्यक है कि न्याय सुनिश्चित करने के लिए बनाए गए प्रक्रिया के नियमों का ईमानदारी से पालन किया जाए और अदालतों को यह देखने के लिए उत्साही होना चाहिए कि उनका कोई उल्लंघन न हो।**

41. इस संबंध में, हम *मनु शर्मा बनाम राज्य (दिल्ली का राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र) [(2010) 6 एस. सी. सी. 1:* (2010) 2 एस. सी. सी. (आपराधिक) 1385] जिसमें यह कहा गया हैः (एससीसी पीपी. पृ. 79-80, पैरा 197)

> *"197.* भारतीय आपराधिक न्यायशास्त्र में, अभियुक्त को दुनिया के कुछ देशों के विभिन्न न्यायशास्त्रों की तुलना में कुछ लाभप्रद स्थिति में रखा जाता है। *भारत में न्याय प्रशासन प्रणाली मानवाधिकारों और मानव जीवन की गरिमा को बहुत उच्च स्तर पर रखती है। हमारे न्यायशास्त्र में एक अभियुक्त को दोषी साबित होने तक निर्दोष माना जाता है, कथित अभियुक्त निष्पक्षता और सच्ची जांच और निष्पक्ष सुनवाई का हकदार है और अभियोजन पक्ष से अपराध के मुकदमे में संतुलित भूमिका निभाने की उम्मीद की जाती है।* अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए विवेकपूर्ण, निष्पक्ष, पारदर्शी और त्वरित जॉच होनी चाहिए कानून के मूल शासन के साथ। ये हमारे आपराधिक न्यायशास्त्र के मौलिक सिद्धांत हैं और ये भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 और 21 में निहित संवैधानिक जनादेश के अनुरूप हैं।
>
> (जोर दिया गया)

**42.** यह अतिशयोक्ति नहीं होगी यदि यह कहा जाए कि एक "निष्पक्ष सुनवाई" आपराधिक न्यायशास्त्र का केंद्र है और एक तरह से, एक लोकतांत्रिक राजनीति का एक महत्वपूर्ण पहलू है जो कानून के शासन द्वारा शासित है। "निष्पक्ष सुनवाई" से इनकार करना मानवाधिकारों को सूली पर चढ़ाना है। यह उचित प्रक्रिया की अवधारणा में कानून से निहित है। **"निष्पक्ष सुनवाई" के सिद्धांत और परीक्षण के दौरान उसी के अभ्यास पर जोर देते हुए, अदालतों की ओर से यह देखना अनिवार्य है कि क्या किसी व्यक्तिगत मामले में या मामलों की श्रेणी में, किसी निश्चित प्रावधान का पालन न करने के कारण, दोषसिद्धि के फैसले को वापस लेना अपरिहार्य है या यह एक निर्विवाद निष्कर्ष पर पहुंचने पर निर्भर है कि वास्तव में पर्याप्त अन्याय हुआ है।**

(जोर दिया गया)

**ज़हिरा हबीबुल्ला एच. शेख बनाम गुजरात राज्य, (2004) 4 एससीसी 158**

**"35.** इस न्यायालय ने अक्सर इस बात पर जोर दिया है कि एक आपराधिक मामले में कार्यवाही का भाग्य हमेशा पूरी तरह से पक्षों के हाथों में नहीं छोड़ा जा सकता है, अपराध सार्वजनिक रूप से गलत हैं और सार्वजनिक अधिकारों और कर्तव्यों का उल्लंघन करते हैं, जो एक समुदाय के रूप में पूरे समुदाय को प्रभावित करते हैं और **सामान्य रूप से समाज के लिए हानिकारक। निष्पक्ष सुनवाई की अवधारणा में अभियुक्त, पीड़ित और समाज के हितों का परिचित त्रिकोण शामिल है और यह समुदाय है जो राज्य और अभियोजन एजेंसियों के माध्यम से कार्य करता है। समाज के हितों को पूरी तरह से तिरस्कार और अवांछित व्यक्ति के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। न्याय के प्रशासन में जनता के विश्वास को बनाए रखने के लिए अदालतों को हमेशा एक प्रमुख कर्तव्य माना गया है-जिसे अक्सर "कानून की महिमा" को सही साबित करने और बनाए रखने के कर्तव्य के रूप में संदर्भित किया जाता है। न्याय के उचित प्रशासन को हमेशा एक निरंतर प्रक्रिया के रूप में देखा गया है, उसके सामने का मामला जो भविष्य में कानून की अदालत के रूप में कार्य करने की अपनी क्षमता की रक्षा करने के लिए विशेष मामले के निर्धारण तक सीमित नहीं है।** यदि एक आपराधिक न्यायालय को न्याय देने में एक प्रभावी साधन बनना है, तो

पीठासीन न्यायाधीश को एक दर्शक और केवल रिकॉर्डिंग मशीन बनना बंद कर देना चाहिए, जो मुकदमे में एक प्रतिभागी बन कर खुफिया जानकारी, सक्रिय रुचि और सही निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए आवश्यक सभी प्रासंगिक सामग्रियों को उजागर करता है, ताकि सच्चाई का पता लगाया जा सके और दोनों पक्षों और उस समुदाय को निष्पक्षता और निष्पक्षता के साथ न्याय प्रदान किया जा सके जिसकी वह सेवा करता है। आपराधिक न्याय का प्रशासन करने वाले न्यायालय कार्यवाही के संबंध में हुए परेशान करने वाले या दमनकारी आचरण के प्रति आंखें मूंद लें, भले ही एक निष्पक्ष सुनवाई अभी भी संभव हो, सिवाय निष्पक्ष और स्वतंत्रता न्यायनिर्णायकों के रूप में न्यायाधीशों के निष्पक्ष नाम और स्थिति को कम करने के जोखिम के।

xxx xxx xxx

**39. अभियुक्त या अभियोजन पक्ष को निष्पक्ष सुनवाई देने में विफलता कानून की उचित प्रक्रिया के न्यूनतम मानकों का भी उल्लंघन करती है। कानून की उचित प्रक्रिया की अवधारणा में यह अंतर्निहित है कि निंदा केवल उस मुकदमे के बाद की जानी चाहिए जिसमें सुनवाई वास्तविक हो, न कि दिखावा या केवल प्रहसन और ढोंग। चूंकि निष्पक्ष सुनवाई के लिए प्रक्रिया को संरक्षित करने के लिए एक अवसर की आवश्यकता होती है, इसलिए जल्दबाजी में, नाट्य-प्रबंधित, अनुकूल और पक्षपातपूर्ण परीक्षण द्वारा इसे नष्ट और उल्लंघन किया जा सकता है।**

**xxx xxx xxx**

**54. यद्यपि न्याय को आँखों पर पट्टी बांधते हुए दर्शाया गया है, जैसा कि लोकप्रिय रूप से कहा जाता है, यह केवल एक पर्दा है कि कानून को लागू करके और न्याय का प्रशासन करके उसके सामने लाए गए कारण पर निर्णय सुनाते समय यह न देखा जाए कि उसके सामने कौन पक्ष है और न्याय की विफलता को रोकने के अपने कर्तव्य की अवहेलना करते हुए, न्यायालय के मन/ध्यान को कारण या उसके सामने की सच्चाई से दूर न किया जाए।** जब एक आम नागरिक शक्तिशाली प्रशासन के खिलाफ शिकायत करता है, कानून में गारंटीकृत अपने अधिकार की रक्षा में दिखाई गई कोई भी उदासीनता, निष्क्रियता या सुस्ती अदालतों की ऐसी निष्क्रियता या सुस्त कार्रवाई से पंगु हो जाएगी और न्यायिक प्रणाली में अंतर्निहित विश्वास को कई चरणों

में नष्ट कर देगी जो अंततः देश की न्याय-वितरण प्रणाली को ही नष्ट कर देगा। **न्याय करना है सर्वोपरि विचार और उस कर्तव्य को त्याग नहीं किया जा सकता है या लाल हेरिंग में हेरफेर करके कम नहीं किया जा सकता है।**

(जोर दिया गया)

**निर्दोषता और शीघ्र परीक्षण की धारणा**

11. जब तक कोई कानून अन्यथा संकेत नहीं देता है, तब तक आपराधिक मुकदमा निर्दोष होने के अनुमान के साथ शुरू होगा। यह सिद्धांत अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि न्यायालय सत्य की खोज में मुकदमा शुरू करता है। यद्यपि एक अभियुक्त एक अपराध के लिए आरोपित किया जाता है, यह न्यायालय है जिसे उचित संदेह से परे लगाए गए आरोपों को साबित करने वाले अभियोजन पक्ष पर अपनी अंतरात्मा को संतुष्ट करना होता है। उपरोक्त उद्देश्य के लिए, एक अभियुक्त को अपनी बेगुनाही साबित करने के लिए एक अच्छी व्यवस्था देनी होगी। प्रक्रियात्मक सुरक्षा का अनुपालन उपरोक्त उद्देश्य के लिए है। हालांकि, इस तरह के प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपाय न केवल एक निष्पक्ष सुनवाई सुनिश्चित करेंगे, बल्कि अभियोजन पक्ष को यह पुष्टि करने में भी मदद करेंगे कि उसने अपनी भूमिका निष्पक्ष रूप से निभाई है।

12. निष्पक्ष सुनवाई की अवधारणा एक अस्पष्ट विचार नहीं है, बल्कि एक निर्णायक विचार है। जबकि त्वरित सुनवाई समाज सहित सभी के सर्वोत्तम हित में है, गति केवल प्रक्रियात्मक तंत्र के माध्यम से निर्धारित की जा सकती है, और यह प्रक्रियात्मक कानून की अज्ञानता में केवल न्यायालय के आदेश पर नहीं किया जा सकता है। साथ ही, कानून की सहायता से ध्यान रखा जाना चाहिए, ताकि न्याय की विफलता को रोका जा सके, जब देरी उद्देश्य से की जाती है। इस प्रकार, एक त्वरित मुकदमे को, निष्पक्ष मुकदमे का एक पहलू होने के नाते, अपनी लापरवाही से बाद

वाले को नष्ट करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। न्यायालय की ओर से कोई भी चिंता, या तो कानून के उल्लंघन में परीक्षण में तेजी लाने के लिए, या अनावश्यक रूप से देरी करने के लिए, निष्पक्ष मुकदमे को गंभीर रूप से बाधित करेगी। ऐसे मामले में अभियोजन या बचाव पक्ष को परिणाम भुगतने होंगे।

**पूर्ववर्ती**

**मो० हुसैन बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली की सरकार), (2012) 9 एस. सी. सी. 408**

**"40. "अपराध के आरोपी व्यक्ति के खिलाफ त्वरित सुनवाई और निष्पक्ष सुनवाई अनुच्छेद 21 का अभिन्न अंग है। हालाँकि, त्वरित सुनवाई के अधिकार और अभियुक्त के निष्पक्ष सुनवाई के अधिकार के बीच गुणात्मक अंतर है। अभियुक्त के निष्पक्ष सुनवाई के अधिकार के विपरीत, त्वरित सुनवाई के अधिकार से वंचित होने से अभियुक्त का अपना बचाव करने में पूर्वाग्रह नहीं होता है। त्वरित सुनवाई का अधिकार अपनी प्रकृति में सापेक्ष है। यह विभिन्न परिस्थितियों पर निर्भर करता है।** देरी के प्रत्येक मामले में आपराधिक मुकदमे के समापन को ऐसे मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में देखा जाना चाहिए। अभियोजन शुरू होने के बाद से केवल कई वर्षों का अंतराल अभियोजन को बंद करने को उचित नहीं ठहरा सकता है या अभियोग को खारिज करना। **अभियुक्त के त्वरित सुनवाई के अधिकार से संबंधित कारकों को समाज पर अपराध के प्रभाव और न्यायिक प्रणाली में लोगों के विश्वास की तुलना में तौलना होगा। त्वरित सुनवाई अभियुक्त के अधिकारों को सुरक्षित करती है लेकिन यह सार्वजनिक न्याय के अधिकारों को बाधित नहीं करती है। अपराध की प्रकृति और गंभीरता, अंतर्वलित व्यक्तियों, सामाजिक प्रभाव और सामाजिक आवश्यकताओं को अभियुक्त के त्वरित विचारण के अधिकार के साथ तौला जाना चाहिए और यदि संतुलन पूर्व के पक्ष में झुकाव देती है तो आपराधिक विचारण का समापन अभियोजन के जारी रहने के विरुद्ध नहीं होना चाहिए और यदि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अभियुक्त का अधिकार और स्थिति**

**<u>की अनिवार्यता संतुलन को उसके पक्ष में झुकाव देती है तो अभियोजन का अंत किया जा सकता है। इन सिद्धांतों को तब भी लागू होना चाहिए जब अपील अदालत का सामना इस सवाल से किया जाता है कि क्या किसी आरोपी पर फिर से मुकदमा चलाने का आदेश दिया जाना चाहिए या नहीं।</u>**

(जोर दिया गया)

**हरियाणा राज्य बनाम राम मेहर (2016) 8 एस. सी. सी. 762**

"24. इस न्यायालय के निर्णयों का जब स्पष्ट रूप से विश्लेषण किया जाता है तो वे स्पष्ट रूप से बताते हैं कि निष्पक्ष मुकदमे की अवधारणा अमूर्तता के दायरे में नहीं है। यह कोई अस्पष्ट विचार नहीं है। यह एक ठोस घटना है। यह कठोर नहीं है और इसे लागू करने के लिए कोई स्ट्रैटजैकेटवर्ती जकड़जाम सूत्र नहीं हो सकता है। कई बार इसमें आवश्यक लचीलापन होता है। इसलिए, इसे इसके अनुप्रयोग में किसी भी प्रकार की कठोरता या लचीलेपन के साथ जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है या पहना नहीं जा सकता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि इसके दायरे में निष्पक्ष सुनवाई के लिए आरोपी, पीड़ित और सामूहिक रूप से निष्पक्षता की आवश्यकता होती है। न तो अभियुक्त और न ही अभियोजन पक्ष और न ही पीड़ित जो समाज का हिस्सा है, दूसरे पर पूर्ण प्रभुत्व का दावा कर सकते हैं। एक बार पूर्ण प्रभुत्व की पहचान हो जाने के बाद, स्थापित कानूनी मानदंडों की अवहेलना करते हुए मुकदमे के संचालन में एक अराजक अव्यवस्था लाने की प्रभाव क्षमता होगी। न्याय करने का जुनून होना चाहिए लेकिन यह कारणों से प्रेरित होना चाहिए और किसी भी प्रकार के अस्पष्ट उकसावे से प्रेरित नहीं होना चाहिए। यह तथ्य स्थिति पर निर्भर करेगा; स्थापित मानदंड और मान्यता प्राप्त सिद्धांत और पूरी तरह से तथ्यात्मक परिदृश्य की अंतिम सराहना। ऐसे मामले हो सकते हैं जो आदेश दे सकते हैं 13 कम्पार्टमेंटलाइजेशन लेकिन इसे एक अनम्य नियम नहीं कहा जा सकता है। प्रत्येक अनियमितता को निष्पक्ष सुनवाई के क्षेत्र में नहीं लाया जा सकता है। ऐसी परिस्थितियाँ हो सकती हैं जहाँ पीड़ित के साथ अन्याय एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इसका केंद्रीय उद्देश्य यह देखना है कि जब मुकदमा चलाया जाए तो अन्याय से बचा जाए। साथ ही निष्पक्ष सुनवाई की अवधारणा

को इस हद तक अनुमति नहीं दी जा सकती है कि सीआरपीसी या अन्य अधिनियमों के अनुसार सुनवाई करने का प्रणालीगत आदेश बचाव पक्ष या अभियोजन पक्ष की सनक और इच्छाओं के लिए गिरवी रख दिया जाए।संहिता के आदेश को हवा में नहीं फेंका जा सकता है।ऐसी स्थिति में, जैसा कि कई प्राधिकरणों में निर्धारित किया गया है, अदालतों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। निष्पक्षता के अनुरोध का उपयोग स्पेन में महल बनाने के लिए नहीं किया जा सकता है या धूप वाली दोपहर में एक उज्ज्वल चंद्रमा को देखने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इसे प्रणाली में एक जैविक विकार पैदा करने के लिए स्वीकार नहीं किया जा सकता है। परीक्षण की अवधारणा की शुरुआत करने के लिए एक उपजाऊ दिमाग को खाद देने के लिए इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

**तालाब हाजी हुसैन बनाम मधुर पुरुषोत्तम मोंडकर, 1958 एससीआर 1226 (पृष्ठ 1232 पर)**

"अब यह स्पष्ट है कि आपराधिक प्रक्रिया का प्राथमिक उद्देश्य अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ निष्पक्ष सुनवाई सुनिश्चित करना है। प्रत्येक आपराधिक मुकदमा अभियुक्त के पक्ष में निर्दोषता की धारणा के साथ शुरू होता है; और संहिता के प्रावधान इस तरह से बनाए गए हैं कि एक आपराधिक मुकदमा इस आवश्यक धारणा के साथ शुरू होना चाहिए और पूरी तरह से नियंत्रित होना चाहिए; लेकिन एक निष्पक्ष मुकदमे के स्वाभाविक रूप से दो उद्देश्य हैं; यह अभियुक्त के लिए निष्पक्ष होना चाहिए और अभियोजन पक्ष के लिए भी निष्पक्ष होना चाहिए।आपराधिक मुकदमे में निष्पक्षता की कसौटी को इस दोहरे दृष्टिकोण से आंका जाना चाहिए। इसलिए यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि आपराधिक मुकदमे में गवाहों को अभियोजन या बचाव पक्ष से किसी भी प्रलोभन या धमकी के बिना सबूत देने में सक्षम होना चाहिए। आपराधिक मुकदमा कभी भी अभियोजन पक्ष द्वारा इस तरह से नहीं चलाया जाना चाहिए जिससे किसी निर्दोष व्यक्ति को दोषी ठहराया जा सके; इसी तरह आपराधिक मुकदमे की प्रगति को आरोपी द्वारा बाधित नहीं किया जाना चाहिए ताकि वास्तव में दोषी अपराधी को बरी किया जा सके। निर्दोष को बरी करना और दोषियों को दोषी ठहराना आपराधिक मुकदमे का उद्देश्य है और इसलिए इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि यदि किसी अभियुक्त व्यक्ति की ओर से कोई

आचरण निष्पक्ष मुकदमे में बाधा डालने की संभावना है, तो न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए उच्च न्यायालयों की अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करने का अवसर है।"

**आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 (दंड प्रक्रिया संहिता, 1973)**

13. सी. आर. पी. सी., 1973, यद्यपि प्रक्रियात्मक कानून से संबंधित एक संहिता है, लेकिन इसमें कई महत्वपूर्ण तत्व हैं। मूल तत्व भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 14,20,21 और 22 को प्रभावी बनाते हैं। कोई भी न्यायालय जो दंडाधिकारी स्तर से शुरू होने वाले आपराधिक मामले से निपटता है, वह दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 को लागू करने के लिए कर्तव्यबद्ध है, जिसका अर्थ केवल भारत के संविधान, 1950 के तहत प्रदत्त अधिकारों का संरक्षण होगा। इसे अलग तरह से रखने के लिए, सी. आर. पी. सी., 1973 एक पुस्तिका है जिसे एक आपराधिक मामले में निष्पक्षता बनाए रखने और बनाए रखने के लिए पेश किया गया है, जो जांच से शुरू होती है और बरी होने या दोषसिद्धि के साथ समाप्त होती है जिससे सजा होती है।

**दस्तावेजों की आपूर्ति**

**दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 173**

**"173. पुलिस अधिकारी की रिपोर्ट:-**

**xxx xxx xxx**

(4) इस धारा के तहत एक रिपोर्ट अग्रेषित करने के बाद, पुलिस स्टेशन का प्रभारी अधिकारी, जांच या मुकदमा शुरू होने से पहले, उप-धारा (1) के तहत अग्रेषित रिपोर्ट की एक प्रति और धारा 154 के तहत दर्ज प्रथम सूचना रिपोर्ट और अन्य सभी दस्तावेजों या प्रासंगिक उद्धरणों की एक प्रति, जिस पर

अभियोजन पक्ष भरोसा करने का प्रस्ताव करता है, उन सभी व्यक्तियों के बयानों और स्वीकारोक्ति, यदि कोई धारा 164 के तहत दर्ज है और उन सभी व्यक्तियों के बयानों सहित, जिनकी अभियोजन पक्ष जांच करने का प्रस्ताव करता है, अभियुक्त को मुफ्त में प्रस्तुत करेगा या प्रस्तुत करेगा। उसके गवाहों के रूप में।

**दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 207 ए**

**"207 ए. पुलिस रिपोर्ट पर शुरू की गई कार्यवाही में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया।**

**xxx xxx xxx**

(3) जाँच शुरू होने पर, , जब अभियुक्त पेश होता है या उसके सामने लाया जाता है, तो खुद को संतुष्ट करेगा कि धारा 173 में निर्दिष्ट दस्तावेज़ अभियुक्त को प्रस्तुत किए गए हैं। और यदि वह पाता है कि अभियुक्त को ऐसे दस्तावेज या उनमें से कोई भी प्रस्तुत नहीं किया गया है, तो वह उसे प्रस्तुत कराएगा।

**दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 251 ए**

**"251A. पुलिस रिपोर्ट पर स्थापित मामलों में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया।**

(1) जब, पुलिस रिपोर्ट पर स्थापित किसी मामले में, अभियुक्त मुकदमे के प्रारंभ में दंडाधिकारी के सामने पेश होता है या लाया जाता है, तो ऐसा दंडाधिकारी खुद को संतुष्ट करेगा कि धारा 173 में निर्दिष्ट दस्तावेज आरोपी को प्रस्तुत किए गए हैं, और यदि वह पाता है कि आरोपी को ऐसे दस्तावेज या उनमें से कोई भी प्रस्तुत नहीं किया गया है, तो वह उन्हें इस तरह से प्रस्तुत कराएगा।

**<u>दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 207</u>**

**"207. अभियुक्त को पुलिस रिपोर्ट और अन्य दस्तावेजों की प्रति प्रदान करें:-**

किसी भी मामले में जहां पुलिस रिपोर्ट पर कार्यवाही शुरू की गई है, दंडाधिकारी बिना किसी देरी के अभियुक्त को निम्नलिखित में से प्रत्येक की एक प्रति मुफ्त में प्रस्तुत करेगाः .

(i) पुलिस रिपोर्ट;

(ii) धारा 154 के अधीन अभिलिखित प्रथम सूचना रिपोर्ट।

(iii) धारा 161 की उप-धारा (3) के अधीन अभिलिखित उन सभी व्यक्तियों के कथन, जिनसे अभियोजन पक्ष अपने गवाहों के रूप में जाँच करने का प्रस्ताव करता है, जिसमें ऐसे किसी भी भाग को शामिल नहीं किया गया है जिसके संबंध में पुलिस अधिकारी द्वारा धारा 173 की उप-धारा (6) के तहत इस तरह के अपवर्जन का अनुरोध किया गया है।

(iv) धारा 164 के तहत दर्ज किए गए इकबालिया बयान और बयान, यदि कोई हों;

(v) धारा 173 की उप-धारा (5) के तहत पुलिस रिपोर्ट के साथ दंडाधिकारी को भेजा गया कोई अन्य दस्तावेज या उसका प्रासंगिक उद्धरणः

बशर्ते कि दंडाधिकारी, खंड (iii) में निर्दिष्ट बयान के किसी ऐसे हिस्से को देखने के बाद और अनुरोध के लिए पुलिस अधिकारी द्वारा दिए गए कारणों पर विचार करने के बाद, निर्देश दे सकता है कि बयान के उस हिस्से की या उसके ऐसे हिस्से की एक प्रति जो दंडाधिकारी उचित समझे, अभियुक्त को प्रस्तुत की

जाएगीः बशर्ते कि यदि दंडाधिकारी का यह समाधान हो जाता है कि खंड (v) में निर्दिष्ट कोई दस्तावेज विशाल है, तो वह अभियुक्त को उसकी एक प्रति प्रस्तुत करने के बजाय यह निर्देश देगा कि उसे केवल व्यक्तिगत रूप से या अदालत में वकील के माध्यम से इसका निरीक्षण करने की अनुमति दी जाएगी।

**<u>दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 208</u>**

**"208. सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय अन्य मामलों में अभियुक्तों को बयानों और दस्तावेजों की प्रतियों की आपूर्तिः-**

जहां, पुलिस रिपोर्ट के अलावा अन्यथा स्थापित किसी मामले में, धारा 204 के तहत प्रक्रिया जारी करने वाले दंडाधिकारी को यह प्रतीत होता है कि अपराध विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य है, तो दंडाधिकारी बिना किसी देरी के अभियुक्त को निम्नलिखित में से प्रत्येक की एक प्रति निःशुल्क प्रस्तुत करेगाः

(i) दंडाधिकारी द्वारा जांचे गए सभी व्यक्तियों के धारा 200 या धारा 202 के तहत दर्ज किए गए बयान;

(ii) धारा 161 या धारा 164 के अधीन अभिलिखित कथन और स्वीकारोक्ति, यदि कोई हो;

(iii) दंडाधिकारी के समक्ष प्रस्तुत कोई भी दस्तावेज जिस पर अभियोजन पक्ष भरोसा करने का प्रस्ताव करता हैः

बशर्ते कि यदि दंडाधिकारी का समाधान हो जाता है कि ऐसा कोई दस्तावेज विशाल है, तो वह अभियुक्त को उसकी एक प्रति प्रस्तुत करने के बजाय निर्देश

देगा कि उसे केवल व्यक्तिगत रूप से या अदालत में वकील के माध्यम से इसका निरीक्षण करने की अनुमति दी जाएगी।

**दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 209**

**"209. सत्र न्यायालय को मामले की प्रतिबद्धता जब अपराध विशेष रूप से उसके द्वारा विचारण योग्य हो।**

जब पुलिस रिपोर्ट पर या अन्यथा स्थापित किसी मामले में, अभियुक्त दंडाधिकारी के समक्ष उपस्थित होता है या लाया जाता है और दंडाधिकारी को ऐसा प्रतीत होता है कि अपराध विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य है, तो वह -

(ए) धारा 207 या धारा 208 के प्रावधानों का पालन करने के बाद, जैसा भी मामला हो, सत्र न्यायालय को मामला सौंपें और जमानत से संबंधित इस संहिता के प्रावधानों के अधीन, आरोपी को तब तक हिरासत में भेजें जब तक कि ऐसी प्रतिबद्धता नहीं की जाती है।

(बी) जमानत से संबंधित इस संहिता के प्रावधानों के अधीन, अभियुक्त को मुकदमे के दौरान और उसके समापन तक हिरासत में भेजें;

(सी) उस न्यायालय को मामले का अभिलेख और दस्तावेज और लेख, यदि कोई हों, जो साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किए जाने हैं, भेजें;

(डी) लोक अभियोजक को सत्र न्यायालय में मामले की प्रतिबद्धता के बारे में सूचित करें।

**<u>दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 238</u>**

**"238. धारा 207 के साथ अनुपालन।**

जब पुलिस रिपोर्ट पर स्थापित किसी वारंट-मामले में, अभियुक्त मुकदमा शुरू होने पर दंडाधिकारी के सामने पेश होता है या लाया जाता है, तो दंडाधिकारी खुद को संतुष्ट करेगा कि उसने धारा 207 के प्रावधानों का पालन किया है।

14. इन प्रावधानों को समझने के लिए, दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 (जिसे इसके बाद "सीआरपीसी, 1898" के रूप में संदर्भित किया गया है) पर वापस जाना होगा। सी. आर. पी. सी., 1898 की धारा 173, अभियुक्त को आवश्यक दस्तावेजों के साथ पुलिस अधिकारी की रिपोर्ट और प्रथम सूचना रिपोर्ट की एक प्रति देने के लिए पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी पर जिम्मेदारी निर्धारित करती है। सी. आर. पी. सी., 1898 की धारा 207ए के अनुसार एक दंडाधिकारी, जांच शुरू होने के बाद, खुद को संतुष्ट करेगा कि आरोपी पर सभी आवश्यक दस्तावेज प्रस्तुत करके सी. आर. पी. सी. 1898 की धारा 173 का उचित अनुपालन किया गया था। इस प्रकार, दंडाधिकारी से अपेक्षा की जाती थी कि वह जांच एजेंसी की ओर से उचित अनुपालन का पता लगाए और यदि ऐसा नहीं किया जाता है, तो उसे ऐसा करने का निर्देश देना चाहिए। इसी तरह की प्रक्रिया सीआरपीसी, 1898 की धारा 251ए के तहत अपनाई गई थी।

15. सी. आर. पी. सी., 1973 की धारा 207 ने अभियुक्त को आवश्यक प्रतियां देने में जाँच एजेंसी की भूमिका को हटा दिया है, इसके स्थान पर दंडाधिकारी की भूमिका है। इसके अतिरिक्त, दंडाधिकारी को यह सुनिश्चित करने का निर्देश दिया जाता है कि जल्द से जल्द उचित अनुपालन किया जाए। सी. आर. पी. सी., 1973 की धारा 208 स्थापित मामलों में उपरोक्त स्थिति को दोहराती है पुलिस रिपोर्ट पर और सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य के अलावा। इसके बाद ही, विशेष रूप से उसके द्वारा विचारणीय अपराध के संबंध में सत्र न्यायालय को मामले की प्रतिबद्धता होगी।

16. सी. आर. पी. सी., 1973 की धारा 238 में कहा गया है कि पुलिस रिपोर्ट पर स्थापित वारंट मामले से निपटने के दौरान दंडाधिकारी खुद को संतुष्ट करेगा कि उसने सी. आर. पी. सी., 1973 की धारा 207 के प्रावधानों का पालन किया है। इन सभी मामलों में, जब अभियुक्त को दंडाधिकारी के सामने पेश किया जाता है या पेश किया जाता है, तो उचित अनुपालन किया जाना चाहिए। इसलिए, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 238 एक दंडाधिकारी के बाध्य कर्तव्य को दोहराती है और यदि ऐसा नहीं किया जाता है, तो मुकदमा शुरू होने के समय इसका पालन किया जाना चाहिए। इस तरह की पुनरावृत्ति केवल निष्पक्ष खेल का एक पहलू होने के कारण उचित अनुपालन पर नए सिरे से जोर देगी। एक अभियुक्त को उन आपत्तिजनक सामग्रियों पर नोटिस दिया जाएगा जो उसके खिलाफ लगाए गए आरोपों की ओर ले जाती हैं। जैसा कि कहा गया है, इस तरह से लगाया गया दायित्व न केवल प्रासंगिक दस्तावेजों की आपूर्ति पर है, बल्कि इस तरह का अनुपालन उचित स्तर पर होना चाहिए ताकि इसमें कोई देरी न हो। इसका उद्देश्य एक अभियुक्त को उसके खिलाफ बताए गए मामले को अच्छी तरह से समझकर मुकदमे का सामना करने में सक्षम बनाना है। हालांकि, दस्तावेजों के एक हिस्से की केवल गैर-आपूर्ति से मुकदमे को दूषित नहीं किया जा सकता है, जब तक कि कोई आरोपी अदालत के समक्ष यह साबित नहीं करता है कि इसने उसके लिए पूर्वाग्रह पैदा किया है। जाहिर है, यह अंततः न्यायालय को अपने समक्ष रखे गए तथ्यों के पर्याप्त मूल्यांकन द्वारा एक उचित निष्कर्ष पर पहुंचना है।

**<u>पूववर्ती</u>**

**नरेश कुमार यादव बनाम रवींद्र कुमार (2008) 1 एस. सी. सी. 632**

**"13. धारा 207 और 208 के संदर्भ में दस्तावेज अभियुक्त को उन सामग्रियों के बारे में जागरूक करने के लिए प्रदान किए जाते हैं जिनका उपयोग उसके खिलाफ करने की मांग की जाती है। इसका उद्देश्य अभियुक्त को ठीक से अपना बचाव करने में सक्षम बनाना है। प्रतियों की आपूर्ति के पीछे का विचार उसे इस बात की सूचना देना है कि उसे मुकदमे में क्या मिलना है। इस न्यायालय ने नूर खान बनाम राजस्थान राज्य [ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 286] और शकीला अब्दुल गफार खान बनाम वसंत रघुनाथ धोबले [(2003) 7 एस. सी. सी. 749 में प्रतियों की आपूर्ति न करने के प्रभाव पर विचार किया हैः2003 7 एस. सी. सी. 749: 2003 एस सी सी (आपराधिक) 1918, अभिनिर्धारित किया गया था कि गैर-आपूर्ति आवश्यक रूप से प्रतिकूल नहीं है।** अदालत को पूर्वाग्रह या अन्यथा के बारे में एक निश्चित निष्कर्ष देना होगा। यहां तक कि पर्यवेक्षण टिप्पणियों का उपयोग अभियोजन पक्ष द्वारा अभियुक्त के खिलाफ सामग्री या सबूत के रूप में नहीं किया जा सकता है। यदि पर्यवेक्षण टिप्पणियों के लिए किसी भी अदालत के समक्ष कोई संदर्भ दिया जाता है, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, तो संबंधित अदालत द्वारा उन पर ध्यान नहीं दिया जाना चाहिए। जैसा कि कई उदाहरण सामने आए हैं जब पक्षकार, जैसा कि वर्तमान मामले में, पर्यवेक्षण टिप्पणियों का संदर्भ देते हैं, अपरिहार्य निष्कर्ष यह है कि उनके पास आधिकारिक रिकॉर्ड तक अनधिकृत पहुंच है।

**(जोर दिया गया)**

**पी. गोपालकृष्णन बनाम केरल राज्य, (2020) 9 एस. सी. सी. 161**

**"21. 1973 की संहिता की धारा 207 के तहत अभियुक्त को दस्तावेज़ प्रस्तुत करना संविधान के अनुच्छेद 21 में निहित निष्पक्ष मुकदमे के लिए अभियुक्त के अधिकार का एक पहलू है।**

22. इसी तरह, वी. के. शशिकल बनाम राज्य [(2012) 9 एस. सी. सी. 771:(2013) 1 एस. सी. सी. (आपराधिक) 1010], इस न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः(एस. सी. सी. पृ. 788, पैरा 21)

> "21. इसलिए हमारे सामने जो मुद्दा सामने आया है, वह राज्य द्वारा पेश किए गए मुद्दे और उच्च न्यायालय द्वारा निपटाए गए मुद्दे [*वी. के.*

*शशिकल बनाम राज्य,* 2012 एस. सी. सी.] ऑनलाइन के ए आर 9209 द्वारा निपटाया गया है। *उत्पन्न होने वाला प्रश्न अब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 207 के प्रावधानों के अनुपालन या गैर-अनुपालन का नहीं होगा और दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों की सख्त भाषा की सीमा से परे जाएगा और एक स्वतंत्र और निष्पक्ष मुकदमे के बड़े सिद्धांत को छूएगा जिसे अदालतों द्वारा श्रमसाध्य रूप से दंड प्रक्रिया संहिता के अनुच्छेद 21 की उद्देश्यपूर्ण व्याख्या पर बनाया गया है।* यह अनुरोध करने का चरण नहीं है; समय का प्रवाह जो हुआ है या अभियुक्त का पूर्व आचरण जो सामग्री है। महत्वपूर्ण बात यह है कि यदि किसी दी गई स्थिति में आरोपी अदालत में यह तर्क देते हुए आता है कि जांच एजेंसी द्वारा अदालत को भेजे गए कुछ कागजात अभियोजन पक्ष द्वारा प्रदर्शित नहीं किए गए हैं क्योंकि वही आरोपी का पक्ष लेते हैं, अदालत को आरोपी को उक्त दस्तावेजों तक पहुंच के अधिकार को स्वीकार करना चाहिए, यदि ऐसा दावा किया जाता है। हमारे अनुसार, यह मामले में मुख्य मुद्दा है जिसका सकारात्मक जवाब दिया जाना चाहिए। इस संबंध में, हम यह स्पष्ट रूप से कहना चाहेंगे कि हमें उच्च न्यायालय द्वारा लिए गए दृष्टिकोण [वी. के. शशिकल बनाम राज्य, 2012 एस. सी. सी. ऑनलाइन कार 9209] से सहमत होना मुश्किल लगता है कि अभियुक्त को पूर्वाग्रह की याचिका का परीक्षण करने के लिए मुकदमे के समापन की प्रतीक्षा करनी चाहिए जो उसने उठाई होगी। इस तरह की याचिका का जवाब जल्द से जल्द और निश्चित रूप से मुकदमे के समापन से पहले दिया जाना चाहिए, भले ही इसे आरोपी द्वारा देर से उठाया जा सके। इस तरह हमारे आपराधिक न्यायशास्त्र में न्याय के पैमाने को संतुलित करना होगा।"

(जोर दिया गया)

xxx xxx xxx

38. यह स्पष्ट है कि पुलिस रिपोर्ट के साथ अदालत के निरीक्षण के लिए प्रस्तुत "इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड" सहित सभी दस्तावेज और जिनका अभियोजन पक्ष अभियुक्त के खिलाफ उपयोग करने का प्रस्ताव करता है, 1973 की संहिता की धारा 207 के अधिदेश के अनुसार अभियुक्त को प्रस्तुत किए जाने चाहिए। सङ्गतिपूर्ण बात यह है

कि मेमोरी कार्ड/पेन-ड्राइव की सामग्री अभियुक्त को प्रस्तुत की जानी चाहिए, जिसे मेमारी कार्ड/ पेन-ड्राइव क्लोन की गई प्रति के रूप में किया जा सकता है। **यह महत्वपूर्ण है कि इस तरह के गंभीर अपराध के लिए मुकदमा चलाए जाने वाले व्यक्ति को सभी सामग्री और साक्ष्य पहले से प्रस्तुत किए जाने चाहिए, जिस पर अभियोजन पक्ष मुकदमे के दौरान उसके खिलाफ भरोसा करने का प्रस्ताव करता है। कोई भी अन्य दृष्टिकोण न केवल 1973 की संहिता में निहित वैधानिक जनादेश पर, बल्कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 में निहित निष्पक्ष मुकदमे के लिए एक अभियुक्त के अधिकार पर भी अतिक्रमण करेगा।**

(जोर दिया गया)

17. हम यह स्पष्ट करते हैं कि अभियोजन पक्ष द्वारा दस्तावेजों पर भरोसा करने में, संज्ञान लेने के बाद और आरोप तय करने से पहले अभियुक्त का अधिकार उत्पन्न होगा। इसलिए, संज्ञान लेने और आरोप तय करने के बीच, एक आरोपी के पास उसे दिए गए दस्तावेजों को देखने के लिए पर्याप्त समय होना चाहिए क्योंकि वह बाद में सुनवाई का हकदार है।

(जोर दिया गया)

**आरोपमुक्त**

**दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 227**

**"227. आरोपमुक्त**

यदि, मामले के अभिलेख और उसके साथ प्रस्तुत दस्तावेजों पर विचार करने के बाद, और इस संबंध में अभियुक्त और अभियोजन पक्ष की दलीलें सुनने के बाद, न्यायाधीश यह समझता है कि अभियुक्त के खिलाफ कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है, तो वह अभियुक्त को आरोपमुक्त करेगा और ऐसा करने के लिए अपने कारणों को दर्ज करेगा।"

18. आरोप तय करने के चरण से पहले, न्यायाधीश से किसी अभियुक्त को आरोपमुक्त करने की अपेक्षा की जाती है, यदि उसका विचार है कि अभियुक्त के खिलाफ आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है। यह एक न्यायिक अभ्यास होने के कारण, उसके विवेक को पर्याप्त कारणों से समर्थित किया जाना चाहिए। अपनी शक्तियों के निर्वहन में, उसे अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत अभिलेखों और दस्तावेजों के साथ-साथ दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर विचार करना होता है। "अभियुक्त की दलीलें सुनने के बाद" शब्द एक प्रभावी और सार्थक सुनवाई का संकेत देंगे। यह केवल प्रक्रियात्मक अनुपालन नहीं है। एक न्यायाधीश को खुद को संतुष्ट करना होता है कि अभियुक्त के पास आरोपमुक्त करने की मांग करने से पहले विचार करने और अपनी दलीलें तैयार करने के लिए उचित समय था।इस स्तर पर, एक अभियुक्त को एक ठोस अधिकार मिलता है क्योंकि उसके पास लंबे मुकदमे का सामना करने के बजाय आरोपमुक्त होने का अवसर होता है। इस तरह के अवसर का उपयोग न केवल आवश्यक दस्तावेजों की आपूर्ति करके किया जा सकता है, बल्कि बचाव पक्ष को अपना मामला रखने के लिए समुचित और पर्याप्त समय भी दिया जा सकता है। उपरोक्त उद्देश्य के लिए समय देना न्यायालय का एकमात्र विवेकाधिकार है।

19. न्यायालय का कर्तव्य यह देखना है कि अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत सामग्री अभियुक्त के खिलाफ आरोपित अपराध से यथोचित रूप से संबंधित है या नहीं। जो देखा जाना है वह एक प्रथम दृष्टया मामले का अस्तित्व है। मामला पूर्व-तैयार करने के चरण में है और इसलिए, यह एक पूर्ण पूर्व-परीक्षण नहीं हो सकता है। पर्याप्तता और पर्याप्तता प्रासंगिक कारक हैं जिन्हें देखा जाना चाहिए। परीक्षण संभावना की डिग्री में से एक है।

20. वास्तव में, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 227 एक ऐसा प्रावधान है जो भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 22 को प्रभावी बनाता है। अभियुक्त की सुनवाई का अधिकार अपरिहार्य है। इस अधिकार का प्रयोग करने के लिए उचित परामर्श होना चाहिए। इस तरह के अधिकार को कभी भी प्रक्रियात्मक अधिकार नहीं कहा जा सकता है। यह उस स्तर पर कार्यवाही को चुनौती देने का आधार होगा, लेकिन यह मुकदमे को दूषित नहीं करेगा। यह दोहराने के लिए पर्याप्त है कि यह सुनिश्चित करना अदालत का कर्तव्य है कि आरोपी को अपने वकील से परामर्श करने के लिए पर्याप्त अवसर दिए जाएं।

**पूर्ववर्ती**

**अनोखीलाल बनाम एम. पी. राज्य (2019) 20 एस. सी. सी. 196**

**"22. संबंधित प्रावधान अर्थात। संहिता की धारा 227 और 228 मामले के रिकॉर्ड और उसके साथ प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों पर विचार करने और "उस ओर से अभिलेख और अभियोजन पक्ष की दलीलें सुनने" के बाद आरोप तैयार करने पर विचार करती है। यदि इन प्रावधानों के प्रयोजनों के लिए सुनवाई सार्थक होनी है, और केवल एक नियमित मामला नहीं है, तो उक्त प्रावधानों के तहत अधिकार अपीलार्थी को अस्वीकार कर दिया गया था।**

**23. हमारे सुविचारित विचार में, निचली अदालत को अपने दम पर मामले को कुछ समय के लिए स्थगित कर देना चाहिए था ताकि न्यायमित्र को मामले को तैयार करने के लिए पर्याप्त समय का लाभ मिल सके। हमारे विचार में, निचली अदालत द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण ने मुकदमे के संचालन में तेजी लाई होगी, लेकिन न्याय के उद्देश्य को आगे नहीं बढ़ाया। न केवल ऊपर बताए गए दिन ही आरोप तय किए गए थे, बल्कि उसके बाद एक पखवाड़े के भीतर मुकदमा समाप्त हो गया था। इस प्रक्रिया में, अपीलार्थी कानूनी सहायता के रूप में जिस सहायता का हकदार था, वह वास्तविक और सार्थक नहीं हो सकती थी।**

**xxx xxx xxx**

26. आपराधिक मामलों में निस्संदेह त्वरित निपटान की आवश्यकता होती है और यह स्वाभाविक रूप से निष्पक्ष सुनवाई की गारंटी का हिस्सा होगा। हालाँकि, प्रक्रिया में तेजी लाने के प्रयास निष्पक्षता के बुनियादी तत्वों और अभियुक्त के लिए अवसर की कीमत पर नहीं होने चाहिए, जिसके आधार पर न्याय का पूरा आपराधिक प्रशासन स्थापित किया जाता है। शीघ्र निपटारे के प्रयास में, न्याय के उद्देश्य को कभी भी पीड़ित या त्याग करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। न्याय का कारण और बुनियादी तत्वों को बनाए रखना सर्वोपरि है जो यह सुनिश्चित करते हैं कि एक मूल विचार और आदर्श के रूप में, प्रक्रिया में तेजी लाई जा सकती है, लेकिन प्रक्रिया की तेजी से निगरानी के परिणामस्वरूप कभी भी न्याय के कारण को दफन नहीं किया जाना चाहिए।

**xxx xxx xxx**

**31. <u>अलग होने से पहले, हमें कुछ मानदंड निर्धारित करने चाहिए ताकि वर्तमान मामले में हमने जो दुर्बलताएं देखी हैं, उनकी पुनरावृत्ति न हो।</u>**

**xxx xxx xxx**

**31.3. <u>जब भी किसी विद्वान वकील को न्यायमित्र के रूप में नियुक्त किया जाता है, तो वकील को मामला तैयार करने में सक्षम बनाने के लिए कुछ उचित समय प्रदान किया जा सकता है। इसके लिए कोई कठोर और तेज़ नियम नहीं हो सकता है। हालांकि, कम से कम सात दिनों के समय को आम तौर पर उचित और पर्याप्त माना जा सकता है।</u>**

**31.4. <u>अभियुक्त की ओर से न्यायमित्र के रूप में नियुक्त किसी भी विद्वान वकील को आम तौर पर संबंधित अभियुक्त के साथ बैठक करने और चर्चा करने की अनुमति दी जानी चाहिए। इस तरह की बातचीत सहायक साबित हो सकती है।</u>**

**<u>जैसा कि रमजान खान [इम्तियाज रमजान खान बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2018) 9 एससीसी 160:(2018) 3 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 721]. में लिख गया था।"</u>**

(जोर दिया गया)

**केवल कृष्ण बनाम सूरज भान, 1980 (पूरक) एस. सी. सी. 499**

**"11.** यह प्रस्ताव कि सत्र न्यायालय द्वारा विशेष रूप से विचारण योग्य अपराध के संबंध में शिकायत पर स्थापित मामलों में, यह सुनिश्चित करने के लिए मानक कि प्रारंभिक जांच में एकत्र किए गए साक्ष्य से अभियुक्त के खिलाफ कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार का पता चलता है या नहीं, दंडाधिकारी द्वारा परीक्षण योग्य वारंट मामले में आरोप तय करने के चरण में अपनाए जाने वाले आधार से कम है, अब 1973 की नई संहिता की योजना से स्पष्ट है। 1973 की संहिता की धारा 209 विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय मामलों में प्रतिबद्धता के लिए प्रारंभिक जांच को समाप्त करती है, भले ही ऐसा मामला किसी आपराधिक शिकायत या पुलिस रिपोर्ट पर स्थापित किया गया हो। धारा 209 में कहा गया हैः"जब पुलिस रिपोर्ट पर या अन्यथा स्थापित किसी मामले में अभियुक्त दंडाधिकारी के सामने पेश होता है या लाया जाता है और दंडाधिकारी को यह प्रतीत होता है कि अपराध विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य है, तो वह मामले को सत्र न्यायालय को सौंप देगा।" यदि कमिटिंग दंडाधिकारी को लगता है कि जमानत पर चल रहे आरोपी को हिरासत में लेना आवश्यक नहीं है, तो वह जमानत रद्द नहीं कर सकता है। यह धारा 209 के खंड (बी) में आने वाले "जमानत से संबंधित इस संहिता के प्रावधानों के अधीन" शब्दों से स्पष्ट किया गया है। इसलिए, यदि आरोपी पहले से ही जमानत पर है, तो उसकी जमानत मनमाने ढंग से रद्द नहीं की जानी चाहिए। **1973 संहिता की धारा 227 अभियुक्त को लंबे समय तक उत्पीड़न से बचाने के लिए एक और लाभकारी प्रावधान किया है जो एक लंबे मुकदमे के लिए आवश्यक है। इस धारा में यह प्रावधान है कि यदि मामले के रिकॉर्ड अभिलेख उसके साथ प्रस्तुत दस्तावेजों और अभियुक्त और अभियोजन पक्ष की प्रस्तुतियों पर विचार करने पर, न्यायाधीश इस बात से आश्वस्त नहीं है कि अभियुक्त के खिलाफ कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है, तो उसे इस धारा के तहत अभियुक्त को आरोपमुक्त करना होगा और ऐसा करने के लिए अपने कारणों को दर्ज करना होगा।**

(जोर दिया गया)

**हरदीप सिंह बनाम पंजाब राज्य, (2014) 3 एस. सी. सी. 92**

**"100.** हालाँकि, ऐसे मामलों की एक श्रृंखला है जिसमें इस न्यायालय ने **दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227, 228, 239, 240, 241, 242 और 245 के प्रावधानों पर**

**विचार करते हुए, अदालत ने लगातार यह अभिनिर्धारित किया है कि आरोप तय करने के स्तर पर इस सवाल पर अपना दिमाग लगाना होगा कि क्या अभियुक्त द्वारा अपराध किए जाने का अनुमान लगाने के लिए कोई आधार है या नहीं। अदालत को यह देखना होगा कि क्या अभिलेख पर लाई गई सामग्री अभियुक्त को अपराध से यथोचित रूप से जोड़ती है। अधिक पूछताछ की आवश्यकता नहीं है। उपरोक्त प्रावधानों पर विचार करते समय, प्रथम दृष्टया मामले का परीक्षण लागू किया जाना है। अदालत को यह पता लगाना होगा कि क्या अभियोजन पक्ष द्वारा सबूत के रूप में प्रस्तुत की जाने वाली सामग्री अदालत के लिए आरोपी के खिलाफ आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त है।** (*कर्नाटक राज्य बनाम एल. मुनिस्वामी* [(1977) 2 एस. सी. सी. 699:1977 एस. सी. सी. (सी. आर. आई) 404:ए० आई० आर० 1977 एसएससी 1489, 1489], *अखिल भारतीय बैंक अधिकारी परिसंघ बनाम भारत संघ* (1989) 4 एससीसी 90:1989 एससीसी (एल एंड एस) 627:ए. आई. आर. 1989 एस. सी. 2045], *स्त्री अत्याचार विरोधी परिषद बनाम दिलीप नाथुमल चोरडिया* [(1989) 1 एस. सी. सी. 715:1989 *एम. पी. राज्य बनामकृष्ण चंद्र सक्सेना* [(1996) 11 एससीसी 439:1997 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 35] और *एम. पी. राज्य बनाममोहनलाल सोनी* [(2000) 6 एससीसी 338:2000 एस. सी. सी. (सी. आर. आई) 1110: ए. आई. आर. 2000 एस. सी. 2583]

101. *दिलावर बालू कुराने बनाम महाराष्ट्र राज्य* (2002) 2 एस. सी. सी. 135: 2002 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 310], इस न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 और 228 के प्रावधानों पर विचार करते हुए, *भारत संघ बनाम प्रफुल्ल कुमार सामल* [(1979) 3 एस. सी. सी. 4 में इस न्यायालय के पहले के फैसले पर बहुत अधिक भरोसा रखाः1979 एस. सी. सी. (सी. आर. आई) 609:ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 366] और यह अभिनिर्धारित किया कि आरोप तय करने के प्रश्न पर विचार करते समय, न्यायालय यह पता लगाने के सीमित उद्देश्य के लिए साक्ष्य पर विचार कर सकता है कि क्या अभियुक्त के खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला बनाया गया है या नहीं और क्या अदालत के समक्ष रखी गई सामग्री अभियुक्त के खिलाफ गंभीर संदेह का खुलासा करती है जिसे ठीक से समझाया नहीं गया है। ऐसी स्थिति में, न्यायालय आरोप तय करने और मुकदमे के साथ आगे बढ़ने में न्यायसंगत है। अदालत को मामले की व्यापक संभावनाओं, साक्ष्य के कुल प्रभाव और अदालत के

समक्ष पेश किए गए दस्तावेजों पर विचार करना होता है, लेकिन अदालत को मामले के पक्ष और विपक्ष की बारीकी से जांच नहीं करनी चाहिए और सबूतों को तौलना चाहिए जैसे कि वह एक परीक्षण कर रहा है।"

(जोर दिया गया)

**सज्जन कुमार बनाम सी. बी. आई. (2010) 9 एस. सी. सी. 368**

***"दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 और 228 के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग***

**21.** संहिता की धारा 227 और 228 के दायरे के बारे में अधिकारियों के विचार करने पर, निम्नलिखित सिद्धांत सामने आते हैंः

(i) न्यायाधीश के पास दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के तहत आरोप तय करने के प्रश्न पर विचार करते समय यह पता लगाने के सीमित उद्देश्य के लिए साक्ष्य की छान-बीन करने और तौलना करने की निस्संदेह शक्ति है कि अभियुक्त के खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला बनाया गया है या नहीं। प्रथम दृष्टया मामला निर्धारित करने के लिए परीक्षण प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा।

(ii) जहां अदालत के समक्ष रखी गई सामग्री अभियुक्त के खिलाफ गंभीर संदेह का खुलासा करती है जो ठीक से नहीं है। यह समझाया गया है कि अदालत आरोप तय करने और मुकदमे के साथ आगे बढ़ने में पूरी तरह से उचित होगी।

(iii) न्यायालय केवल डाकघर या अभियोजन पक्ष के मुखपत्र के रूप में कार्य नहीं कर सकता है, लेकिन उसे मामले की व्यापक संभावनाओं, साक्ष्य और न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत दस्तावेजों के कुल प्रभाव, किसी भी बुनियादी दुर्बलता आदि पर विचार करना होगा। हालाँकि, इस स्तर पर, मामले के पक्ष और विपक्ष की बारीकी से जांच नहीं की जा सकती है और सबूतों को ऐसे तौला नहीं जा सकता है जैसे कि वह एक मुकदमा चला रहा हो।

(iv) यदि अभिलेख की सामग्री के आधार पर, अदालत यह राय बना सकती है कि अभियुक्त ने अपराध किया होगा, तो वह आरोप तय कर सकती है,

हालांकि दोषसिद्धि के लिए निष्कर्ष को उचित संदेह से परे साबित करने की आवश्यकता है कि अभियुक्त ने अपराध किया है।

(v) आरोप तैयार करने के समय, अभिलेख पर सामग्री के संभावित मूल्य में नहीं जाया जा सकता है, लेकिन आरोप तैयार करने से पहले न्यायालय को अभिलेख पर रखी गई सामग्री पर अपना न्यायिक दिमाग लगाना चाहिए और यह संतुष्ट होना चाहिए कि अभियुक्त द्वारा अपराध करना संभव था।

(vi) धारा 227 और 228 के स्तर पर, न्यायालय को यह पता लगाने के लिए अभिलेख पर सामग्री और दस्तावेजों का मूल्यांकन करने की आवश्यकता है कि क्या उनसे उनके अंकित मूल्य पर सामने आने वाले तथ्य कथित अपराध का गठन करने वाले सभी तत्वों के अस्तित्व का खुलासा करते हैं।इस सीमित उद्देश्य के लिए, साक्ष्य की छान-बीन करें क्योंकि उस प्रारंभिक चरण में भी यह उम्मीद नहीं की जा सकती है कि अभियोजन पक्ष जो कुछ भी सुसमाचार सत्य के रूप में बताता है उसे स्वीकार करे, भले ही वह सामान्य ज्ञान या मामले की व्यापक संभावनाओं के खिलाफ हो।

(vii) यदि दो विचार संभव हैं और उनमें से एक केवल संदेह को जन्म देता है, जैसा कि गंभीर संदेह से अलग है, तो विचारण न्यायाधीश को अभियुक्त को आरोपमुक्त करने का अधिकार होगा और इस स्तर पर, उसे यह देखने का अधिकार नहीं होगा कि परीक्षण दोषसिद्धि में समाप्त होगा या दोषमुक्त।

xxx xxx xxx

**24.** दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 228 के तहत आरोप तय करने के चरण में या धारा 227 के तहत दायर आरोपमुक्त करने की याचिका पर विचार करते समय, यह मजिस्ट्रेट या संबंधित न्यायाधीश के लिए नहीं है कि वह पक्ष और विपक्ष, विश्वसनीयता या स्वीकार्यता आदि सहित सभी सामग्रियों का विश्लेषण करे। मुकदमे में, संबंधित न्यायाधीश को उनके साक्ष्य मूल्य, विश्वसनीयता या अन्यथा बयान, विभिन्न दस्तावेजों की सत्यता की सराहना करनी होती है और वह किसी न किसी तरह से निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र होता है।"

**मो० अजमल आमिर कसाब बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2012) 9 एससीसी 1**

“465. यह सब विकास स्पष्ट रूप से उस दिशा को इंगित करता है जिसमें वकीलों/कानूनी सहायता तक पहुंच से संबंधित कानून विकसित हुआ है और विकसित हो रहा है। अब यह तर्क देने में देर हो चुकी है कि अनुच्छेद 22 (1) केवल एक सक्षम प्रावधान है और कानूनी व्यवसायी द्वारा बचाव का अधिकार केवल दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 304 के तहत प्रदान किए गए मुकदमे के शुरू होने पर लागू होता है।

xxx xxx xxx

471. खत्री (2) [(1981) 1 एस. सी. सी. 627 में न्यायालय के मुखर शब्दः1981 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 228] समान रूप से, यदि अधिक नहीं, तो आज भी प्रासंगिक हैं, जब उन्हें पहली बार उच्चारण किया गया था। खत्री (2) [(1981) 1 एस. सी. सी. 627:1981 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 228] में न्यायालय ने अभियुक्त को एक वकील तक पहुँचने की तत्काल आवश्यकता के कारणों का भी संकेत दिया, जो कि अपराधों के आरोपी अधिकांश भारतीयों की निर्धनता और निरक्षरता है।

472. जैसा कि खत्री (2) [(1981) 1 एस. सी. सी. 627 में उल्लेख किया गया हैः1981 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 228] जहाँ तक 1981 में गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को पुलिस या जेल हिरासत में रिमांड का विरोध करने और जमानत के लिए आवेदन करने के लिए दंडाधिकारी के समक्ष अपनी पहली प्रस्तुति के चरण में एक वकील की आवश्यकता होती है। जब आरोप-पत्र प्रस्तुत किया जाता है तो उसे एक वकील की आवश्यकता होती है और दंडाधिकारी भविष्य की कार्यवाही निर्धारित करने के लिए आरोप-पत्र पर अपना दिमाग लगाते हैं। उसे अपने खिलाफ आरोप तय करने के चरण में एक वकील की आवश्यकता होगी और उसे निश्चित रूप से मुकदमे में अपना बचाव करने के लिए एक वकील की आवश्यकता होगी।

xxx xxx xxx

**474. इसलिए, हमें यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि कानूनी सहायता प्राप्त करने, परामर्श करने और कानूनी व्यवसायी द्वारा बचाव करने का अधिकार तब उत्पन्न होता है जब किसी संज्ञेय अपराध के संबंध में गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को पहले दंडाधिकारी के समक्ष पेश किया जाता है। तदनुसार, हम यह मानते हैं कि यह दंडाधिकारी का कर्तव्य और दायित्व है जिसके समक्ष संज्ञेय अपराध करने के आरोपी**

**व्यक्ति को पहले पेश किया जाता है ताकि उसे पूरी तरह से जागरूक किया जा सके कि कानूनी व्यवसायी द्वारा परामर्श करना और उसका बचाव करना उसका अधिकार है और यदि उसके पास अपनी पसंद के वकील को नियुक्त करने का कोई साधन नहीं है, तो उसे राज्य की कीमत पर कानूनी सहायता से प्रदान किया जाएगा। यह अधिकार संविधान के अनुच्छेद 21 और 22 (1) से आता है और इसे सख्ती से लागू करने की आवश्यकता है। हम, तदनुसार, देश के सभी दंडाधिकारियों को उपरोक्त कर्तव्य और दायित्व का ईमानदारी से निर्वहन करने का निर्देश देते हैं और आगे यह स्पष्ट करते हैं कि कर्तव्य का पूरी तरह से निर्वहन करने में कोई भी विफलता कर्तव्य में लापरवाही के बराबर होगी और संबंधित दंडाधिकारी को विभागीय कार्यवाही के लिए उत्तरदायी बना देगा।**

**475.** यहां यह स्पष्ट करने की आवश्यकता है कि एक कानूनी व्यवसायी द्वारा परामर्श करने और बचाव करने के अधिकार को पुलिस पूछताछ के दौरान एक वकील की उपस्थिति को मंजूरी या अनुमति देने के रूप में नहीं माना जाना चाहिए। **हमारे अनुसार, कानून की प्रणाली में, एक वकील की भूमिका मुख्य रूप से अदालती कार्यवाही पर केंद्रित होती है। अभियुक्त को पुलिस या न्यायिक हिरासत में रिमांड का विरोध करने और जमानत देने के लिए एक वकील की आवश्यकता होगी; धारा 164 सी. आर. पी. सी. के संदर्भ में इकबालिया बयान देने के मामले में उसे कानूनी परिणामों को स्पष्ट रूप से समझाने के लिए; जब अदालत पुलिस द्वारा समर्पित आरोप पत्र की जांच करती है तो उसका प्रतिनिधित्व करने और उसके अलावा, निश्चित रूप से, मुकदमे के लिए कार्यवाही के भविष्य के पाठ्यक्रम और आरोप तय करने के चरण पर निर्णय लेता है। इस प्रकार यह देखा जाना चाहिए कि इस देश में एक वकील तक पहुँच का अधिकार मिरांडा [(1966) 16 एल इ डी एण्ड डी 694 पर आधारित नहीं है:384 यू. एस. 436] सिद्धांत, आत्म-दोषारोपण के खिलाफ सुरक्षा के रूप में, जिसके लिए भारतीय कानूनों में पर्याप्त सुरक्षा उपाय हैं। एक वकील तक पहुँच का अधिकार बहुत ही भारतीय कारणों से है; यह संविधान और कानूनों के प्रावधानों से प्रवाहित होता है, और इसका उद्देश्य केवल यह सुनिश्चित करना है कि उन प्रावधानों का व्यवहार में ईमानदारी से पालन किया जाए।**

**xxx xxx xxx**

**477. प्रत्येक अभियुक्त जिसका प्रतिनिधित्व एक वकील द्वारा नहीं किया जाता है, उसे मुकदमे की शुरुआत में एक वकील प्रदान किया जाना चाहिए, जिसे मुकदमे के पूरे पाठ्यक्रम के दौरान उसका प्रतिनिधित्व करने के लिए लगाया जाना चाहिए। भले ही आरोपी वकील नहीं मांगता हो या वह चुप रहता है, यह अदालत का संवैधानिक कर्तव्य है कि वह मुकदमा शुरू करने से पहले उसे एक वकील प्रदान करे। जब तक अभियुक्त स्वेच्छा से एक सूचित निर्णय नहीं लेता है और अदालत को स्पष्ट और असंदिग्ध शब्दों में यह नहीं बताता है कि वह किसी वकील की सहायता नहीं चाहता है और बल्कि व्यक्तिगत रूप से अपना बचाव करेगा, तब तक मुकदमे की शुरुआत में उसे एक वकील प्रदान करने का दायित्व पूर्ण है, और ऐसा करने में विफलता मुकदमे और परिणामी दोषसिद्धि और सजा, यदि कोई हो, को दूषित कर देगी (देखें:- *सुक दास बनाम अरुणाचल प्रदेश का केंद्र शासित प्रदेश* [(1986) 2 एस. सी. सी. 401:1986 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 166)।**

**478. लेकिन मुकदमे के पूर्व चरण में आरोपी को एक वकील प्रदान करने में विफलता का मुकदमे को दूषित करने का समान परिणाम नहीं हो सकता है। इसके अन्य परिणाम हो सकते हैं जैसे कि अपराधी दण्डाधिकारी को अनुशासनात्मक कार्यवाही के लिए उत्तरदायी बनाना, या आरोपी को कानूनी सहायता प्रदान करने में विफल रहने के लिए राज्य के खिलाफ मुआवजे का दावा करने का अधिकार देना। लेकिन यह मुकदमे को तब तक दूषित नहीं करेगा जब तक कि यह नहीं दिखाया जाता है कि मुकदमे से पहले के चरण में कानूनी सहायता प्रदान करने में विफलता के परिणामस्वरूप मुकदमे के दौरान आरोपी के लिए कुछ भौतिक पूर्वाग्रह पैदा हुआ था। इसका निर्णय प्रत्येक मामले के तथ्यों के आधार पर किया जाना चाहिए।"**

(जोर दिया गया)

**दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 228**

**"228. दोष का गठन**

(1) यदि, उपरोक्त रूप में ऐसे विचार और सुनवाई के बाद, न्यायाधीश की राय है कि यह मानने का आधार है कि अभियुक्त ने कोई अपराध किया है जो -

(ए) विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य नहीं है, वह अभियुक्त के खिलाफ आरोप तय कर सकता है और आदेश द्वारा मामले को मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, [या 29 किसी अन्य न्यायिक दंडाधिकारी को मुकदमे के लिए स्थानांतरित कर सकता है। प्रथम श्रेणी और अभियुक्त को मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, या, जैसा भी मामला हो, प्रथम श्रेणी के न्यायिक दंडाधिकारी के समक्ष ऐसी तारीख को उपस्थित होने का निर्देश दें, जो वह उचित समझे, और उसके बाद ऐसा मजिस्ट्रेट] पुलिस रिपोर्ट पर स्थापित वारंट-मामलों के मुकदमे की प्रक्रिया के अनुसार अपराध का परीक्षण करेगा;

(बी) न्यायालय द्वारा विशेष रूप से विचारण योग्य होने पर, वह अभियुक्त के खिलाफ लिखित रूप में आरोप तय करेगा।

(2) जहां न्यायाधीश उप-धारा (1) के खंड (बी) के तहत कोई आरोप तय करता है, वहां आरोप को पढ़ा जाएगा और आरोपी को समझाया जाएगा और आरोपी से पूछा जाएगा कि क्या वह आरोपित अपराध के लिए दोषी है या मुकदमा चलाने का दावा करता है।

21. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 228 की उप-धारा (2) के तहत, न्यायाधीश को किसी भी आरोप को तैयार करते समय, उसे पढ़ने और आरोपी को समझाने के लिए नियुक्त किया जाता है। इसके बाद, अभियुक्त से पूछा जाएगा कि क्या वह आरोपित अपराध को स्वीकार करता है या मुकदमा चलाने का दावा करता है।दिनचर्या के रूप में, वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग से बचना चाहिए, जब तक कि ऐसा करने के लिए मजबूर करने वाले कारण न हों। यह एक ऐसा अवसर है जब न्यायाधीश वकील से बचता है और सीधे आरोपी के संपर्क में रहता है। वह अभियुक्त के जवाब को दर्ज करता है। उन परिस्थितियों में, जब तक कि कोई स्थिति अन्यथा वारंट नहीं करती है, अभियुक्त की उपस्थिति सुनिश्चित की जाएगी।

**<u>गवाहों की परीक्षा दंड प्रक्रिया संहिता,</u>**

**<u>1973 की धारा 230</u>**

**"230. अभियोजन साक्ष्य के लिए तिथि:-**

यदि अभियुक्त अभिवचन करने से इनकार करता है, या अभिवचन नहीं करता है, या मुकदमा चलाने का दावा करता है या धारा 229 के तहत दोषी नहीं ठहराया जाता है, तो न्यायाधीश गवाहों की परीक्षा के लिए एक तारीख तय करेगा, और अभियोजन पक्ष के आवेदन पर, किसी भी गवाह की उपस्थिति को मजबूर करने या किसी दस्तावेज या अन्य चीज़ को पेश करने के लिए कोई प्रक्रिया जारी कर सकता है।.

**<u>सी. आर. पी. सी., 1973 की धारा 231</u>**

**"231. अभियोजन के लिए साक्ष्य:-**

(1) इस प्रकार निर्धारित तिथि पर, न्यायाधीश अभियोजन पक्ष के समर्थन में प्रस्तुत किए जाने वाले सभी साक्ष्य लेने के लिए आगे बढ़ेगा।

(2) न्यायाधीश, अपने विवेकाधिकार पर, किसी भी गवाह की प्रतिपरीक्षा को तब तक स्थगित करने की अनुमति दे सकता है जब तक कि किसी अन्य गवाह या गवाह की परीक्षा नहीं हो जाती है या किसी भी गवाह को आगे की प्रतिपरीक्षा के लिए वापस नहीं ले लिया जाता है।

22. इन दोनों प्रावधानों को एक दूसरे के अनुरूप पढ़ा जाना चाहिए। इस स्तर पर, न्यायालय केवल अभियोजन पक्ष के साक्ष्य से संबंधित है। निष्पक्षता सुनिश्चित करने के लिए, एक सामान्य प्रथा के रूप में, न्यायालय को गवाहों की परीक्षा के लिए एक तारीख तय करनी होती है। इसका उद्देश्य मुख्य परीक्षा और प्रतिपरीक्षा दोनों को एक ही समय में पूरा करना है। तारीख तय करते समय, न्यायालय से अपेक्षा की जाती है कि वह पक्षों की सापेक्ष सुविधा को ध्यान में रखे, हालांकि विवेकाधिकार उसके पास है। दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 231 की उप-धारा (1) न्यायालय, अभियोजन पक्ष और बचाव पक्ष पर इस प्रकार निर्धारित तिथि पर गवाहों की परीक्षा के साथ आगे बढ़ने की जिम्मेदारी निर्धारित करती है। इसलिए, इस कारण से भी, न्यायालय

मुकदमे को खींचने के किसी भी प्रयास के बारे में सचेत रहते हुए, दोनों पक्षों के लिए एक सुविधाजनक तिथि का पता लगाएगा और फिर निर्णय लेगा। इस तरह की परीक्षा को पूरा करना एक नियम का विषय है क्योंकि कोई भी स्थगन न्यायालय के विवेक के अनुसार एक अपवाद हो सकता है। जाहिर है, इस तरह के विवेकाधिकार का उपयोग, प्रकृति में न्यायिक होने के कारण मामला-दर-मामला आधार पर होना है। यह कहने के लिए पर्याप्त है कि प्रतिस्पर्धी हितों के बीच संतुलन बनाना होगा।

**केरल राज्य बनाम रशीद (2019) 13 एस. सी. सी. 297**

**"22. <u>उन आधारों के लिए कोई स्ट्रैटजैकेट हथकड़ी फार्मूला नहीं हो सकता है जिन पर सीआरपीसी की धारा 231 (2) के तहत न्यायिक विवेकाधिकार का प्रयोग किया जा सकता है। विवेकाधिकार का प्रयोग मामले-दर-मामले के आधार पर किया जाना चाहिए। सी. आर. पी. सी. की धारा 231 (2) के तहत एक न्यायाधीश के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत यह पता लगाना है कि यदि आवेदन खारिज कर दिया जाता है, तो क्या स्थगन की मांग करने वाले पक्ष के प्रति पूर्वाग्रह पैदा होगा।</u>**

**23. <u>दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 231 (2) के तहत एक आवेदन पर निर्णय लेते समय, अभियुक्त के अधिकारों और साक्ष्य का नेतृत्व करने के लिए अभियोजन पक्ष के विशेषाधिकार के बीच संतुलन बनाया जाना चाहिए। निम्नलिखित कारकों को ध्यान में रखा जाना चाहिएः</u>**

(i) गवाह पर अनुचित प्रभाव की संभावना;

(ii) गवाह (एस) को धमकी की संभावना;

(iii) संभावना है कि गैर-स्थगन बाद के गवाहों को रक्षा रणनीति को दरकिनार करने के लिए अपनी गवाही को अनुरूप बनाने के लिए समान तथ्यों पर साक्ष्य देने में सक्षम बनाएगा;

(iv) गवाह की स्मृति के नुकसान की संभावना, जिसकी मुख्य परीक्षा पूरी हो चुकी है;

(v) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 309 (1) को ध्यान में रखते हुए मुकदमे में देरी की घटना और गवाहों की अनुपलब्धता, यदि स्थगन की अनुमति है।

"309. कार्यवाहियों को स्थगित या विलम्ब करने की शक्ति।–(1) हर एक में जाँच या मुकदमा कार्यवाही दिन-प्रतिदिन तब तक जारी रहेगी जब तक कि उपस्थित सभी गवाहों से पूछताछ नहीं हो जाती, जब तक कि अदालत को कारण दर्ज करने के लिए अगले दिन से आगे का स्थगन आवश्यक न लगेः" विनोद कुमार बनाम पंजाब राज्य, (2015) 3 एस. सी. सी. 220 भी देखें। (2015) 2 एससीसी (सीआरआई) 226:(2015) 1 एससीसी (एल एंड एस) 712; और एस. जे. चौधरी बनाम राज्य (दिल्ली केंद्र शासित प्रदेश), (1984) 1 एस. सी. सी. 722:1984 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 163]

ये कारक दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 231 (2) के तहत एक न्यायाधीश द्वारा विवेक के प्रयोग का मार्गदर्शन करने के लिए उदाहरणात्मक हैं।

**24. <u>जहां तक संभव हो, आपराधिक मुकदमे विचारण के संचालन में निचली अदालतों द्वारा निम्नलिखित अभ्यास दिशानिर्देशों का पालन किया जाना चाहिएः</u>**

**24.1.** आरोप तय करने के बाद मुकदमे की शुरुआत में एक विस्तृत मामला-कैलेंडर तैयार किया जाना चाहिए।

**24.2.** केस-कैलेंडर में उन तारीखों को निर्दिष्ट किया जाना चाहिए जिन पर गवाहों की मुख्य परीक्षा और जिरह (यदि आवश्यक हो) आयोजित की जानी है।

**24.3.** केस-कैलेंडर को पक्षकारों द्वारा गवाहों को पेश करने के प्रस्तावित आदेश, गवाहों की जांच के लिए अपेक्षित समय, प्रासंगिक समय पर गवाहों की उपलब्धता और अभियोजन पक्ष के साथ-साथ बचाव पक्ष दोनों की सुविधा को ध्यान में रखना चाहिए।

**24.4.** एक ही विषय पर गवाही देने वाले गवाहों की गवाही निकटता से निर्धारित की जानी चाहिए।

**24.5.** दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 231 (2) के तहत स्थगन का अनुरोध मामले-कैलेंडर की तैयारी से पहले किया जाना चाहिए।

**24.6.** स्थगन के अनुरोध के लिए अनुमति प्रत्येक गवाह, या गवाहों के समूह की प्रतिपरीक्षा के स्थगन को उचित ठहराते हुए पर्याप्त कारणों पर आधारित होना चाहिए।

**24.7.** किसी भी गवाह की प्रतिपरीक्षा को स्थगित करने का अनुरोध करते समय, निचली अदालतों को उस गवाह की प्रतिपरीक्षा के लिए एक निकटवर्ती तिथि निर्दिष्ट करनी चाहिए, ऐसे गवाह की परीक्षा के बाद, जिसके लिए अनुरोध किया गया है।

**24.8.** उपरोक्त दिशानिर्देशों के अनुसार तैयार किए गए केस-कैलेंडर का सख्ती से पालन किया जाना चाहिए, जब तक कि उससे प्रस्थान बिल्कुल आवश्यक न हो जाए।

**24.9.** जिन मामलों में निचली अदालतों ने स्थगन का अनुरोध किया है, वहां गवाहों को अनुचित प्रभाव, उत्पीड़न या धमकी के अधीन होने से बचाने के लिए आवश्यक कदम उठाए जाने चाहिए।

(जोर दिया गया)

**<u>दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 233</u>**

**"233. रक्षा में प्रवेश करना।**

(1) जहाँ अभियुक्त को धारा 232 के तहत बरी नहीं किया जाता है, वहाँ उसे अपना बचाव करने और उसके समर्थन में कोई भी सबूत पेश करने के लिए कहा जाएगा।

(2) यदि अभियुक्त कोई लिखित बयान देता है, तो न्यायाधीश उसे अभिलेख के साथ दाखिल करेगा।

(3) यदि अभियुक्त किसी गवाह को उपस्थित होने के लिए विवश करने या किसी दस्तावेज या वस्तु को पेश करने के लिए किसी प्रक्रिया को जारी करने के लिए आवेदन करता है, तो न्यायाधीश ऐसी प्रक्रिया जारी करेगा, जब तक कि वह यह विचार नहीं करता है कि ऐसा आवेदन इस आधार पर अस्वीकार कर दिया जाना

चाहिए कि यह परेशान करने या देरी करने या न्याय के उद्देश्यों को विफल करने के उद्देश्य से किया गया है।

23. इस स्तर पर, अभियुक्त को अपना बचाव करने और कोई भी सबूत पेश करने के लिए कहा जाएगा। यदि अभियुक्त किसी भी गवाह की उपस्थिति या दस्तावेज़ पेश करने के लिए मजबूर करने के लिए प्रक्रिया जारी करने के लिए आवेदन करता है, तो न्यायाधीश ऐसी प्रक्रिया जारी करेगा। जब वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि बचाव पक्ष की ओर से उपरोक्त उद्देश्य के लिए दायर किया गया आवेदन परेशान करने वाला है या कार्यवाही में देरी करने या न्याय के उद्देश्यों को विफल करने के लिए दायर किया गया है, तो उसे अस्वीकार करना पड़ता है। हमें यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि जब दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 233 को लागू करते हुए कोई आवेदन दायर किया जाता है, तो न्यायाधीश प्रक्रिया जारी करने के लिए कर्तव्यबद्ध है, जब तक कि वह उपरोक्त तीन तत्वों के अस्तित्व पर संतुष्ट न हो। कोई भी इनकार एक निष्पक्ष मुकदमे की अवधारणा का अपमान होगा।

**<u>दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 309</u>**

**"309. कार्यवाहियों को स्थगित या विलंब करने की शक्ति:-** (1) प्रत्येक अभियुक्त को व्यक्तिगत रुप से किसी भी परिस्थिति की व्याख्या के लिए पुछताछ या परीक्षण उसके खिलाफ साक्ष्य में पेश होने के उद्देश्य से, अदालत किसी भी स्तर पर बिना पूर्व अभियुक्त को चेतावनी देते हुए उससे ऐसे प्रश्न पूछे जो न्यायालय आवश्यक समझे जाँच या विचारण कार्यवाही दिन-प्रतिदिन तब तक जारी रखी जाएगी जब तक कि उपस्थित सभी गवाहों की जाँच नहीं हो जाती है, जब तक कि न्यायालय को कारण दर्ज करने के लिए अगले दिन से आगे का स्थगन आवश्यक न लगेः

बशर्ते कि जब जांच या मुकदमा भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 376, धारा 376 ए, धारा 376 एबी, धारा 376 बी, धारा 376 सी, धारा 376 डी, धारा 376 डीए या धारा 376 डीबी के तहत किसी अपराध से संबंधित हो, तो जांच या

मुकदमा आरोप पत्र दाखिल करने की तारीख से दो महीने की अवधि के भीतर पूरा किया जाएगा।

(2) यदि न्यायालय किसी अपराध का संज्ञान लेने या विचारण शुरू करने के बाद, किसी जांच या विचारण के प्रारंभ को स्थगित करना या विलम्ब करना आवश्यक या उचित समझता है, तो वह समय-समय पर, दर्ज किए जाने के कारणों से, उसे ऐसी शर्तों पर स्थगित या विलम्ब कर सकता है जो वह उचित समझता है, ऐसे समय के लिए जो वह उचित समझता है, और यदि अभिरक्षा में है तो अभियुक्त को वारंट द्वारा रिमांड कर सकता हैः

बशर्ते कि कोई दंडाधिकारी किसी अभियुक्त व्यक्ति को इस धारा के तहत एक बार में पंद्रह दिनों से अधिक की अवधि के लिए हिरासत में नहीं भेजेगाःबशर्ते कि जब गवाह उपस्थित हों, तो लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले विशेष कारणों को छोड़कर, उनकी जांच किए बिना कोई स्थगन या स्थगन नहीं दिया जाएगा।

बशर्ते कि केवल अभियुक्त व्यक्ति को उस पर अधिरोपित की जाने वाली प्रस्तावित सजा के खिलाफ कारण दिखाने में सक्षम बनाने के उद्देश्य से कोई स्थगन नहीं दिया जाएगाः

बशर्ते कि -

(ए) किसी पक्ष के अनुरोध पर कोई स्थगन नहीं दिया जाएगा, सिवाय इसके कि परिस्थितियाँ उस पक्ष के नियंत्रण से बाहर हों;

(बी) यह तथ्य कि किसी पक्ष का वकील किसी अन्य न्यायालय में लगा हुआ है, स्थगन का आधार नहीं होगा;

(सी) जहां कोई गवाह न्यायालय में उपस्थित है, लेकिन कोई पक्षकार या उसका वकील उपस्थित नहीं है या पक्षकार या उसका वकील यद्यपि न्यायालय में उपस्थित है, गवाह से पूछताछ करने या उससे जिरह करने के लिए तैयार नहीं है, वहां न्यायालय, यदि उचित समझे, तो गवाह का बयान दर्ज कर सकता है और ऐसे आदेश पारित कर सकता है जो वह जैसा भी मामला हो, गवाह की मुख्य परीक्षा या जिरह के साथ प्रदान करता है।

*स्पष्टीकरण 1.*–यदि यह संदेह पैदा करने के लिए पर्याप्त सबूत प्राप्त किए गए हैं कि आरोपी ने कोई अपराध किया है, और यह संभावना प्रतीत होती है कि रिमांड द्वारा और सबूत प्राप्त किए जा सकते हैं, तो यह रिमांड के लिए एक उचित कारण है।

*स्पष्टीकरण 2.*–जिन शर्तों पर विलम्ब या स्थगन दिया जा सकता है, उनमें उचित मामलों में अभियोजन या अभियुक्त द्वारा लागत का भुगतान शामिल है।.

24. यह धारा मुकदमे को जारी रखने पर जोर देती है क्योंकि कोई भी बाधा और देरी न्याय की प्रक्रिया में बाधा डालेगी। आपराधिक मुकदमे में निरंतरता का अत्यधिक महत्व होता है, क्योंकि यह न केवल अदालत को ध्यान केंद्रित करने में मदद करता है, बल्कि गुणवत्तापूर्ण न्याय सुनिश्चित करता है। हालाँकि, अदालतें स्थगन देने में शक्तिहीन नहीं हैं यदि परिस्थितियाँ आवश्यक हैं। इसलिए, धारा 309 के दूसरे और चौथे परंतुक के तहत एक प्रतिबंध के बावजूद, एक स्थगन दिया जा सकता है, बशर्ते कि ऐसा करने वाला पक्ष,अदालत को संतुष्ट करता है। आखिरकार, त्वरित सुनवाई से अभियुक्त को लाभ होता है।

**उत्तर प्रदेश राज्य बनाम शंभू नाथ सिंह (2001) 4 एस. सी. सी. 667**

**“11. पहली उप-धारा निचली अदालतों को आदेश देती है कि कार्यवाही जल्द से जल्द आयोजित की जाएगी, लेकिन "जितनी जल्दी हो सके" शब्दों ने जोड़ों पर कुछ खेल प्रदान किया है और इस तरह के खेल के माध्यम से ही अक्सर मुकदमों में देरी होती है।फिर भी, उप-धारा का अगला अंग मुकदमे के आगे के चरण में अदालत द्वारा अपनाए जाने वाले अधिक जोरदार रुख के लिए लग रहा था। यह वह चरण है जब गवाहों से पूछताछ शुरू होती है।जिस विधायिका ने "जितनी जल्दी हो सके" शब्दों का उपयोग करके उप-धारा के प्रारंभिक अंग में निहित जनादेश की शक्ति को कम कर दिया है, उसने अगले चरण (जब गवाहों की परीक्षा शुरू हो गई है) की आवश्यकता को काफी कठोर बनाने का विकल्प चुना है। एक बार जब मामला उस स्तर पर पहुंच जाता है तो वैधानिक**

**आदेश यह है कि इस तरह की जांच "दिन-प्रतिदिन जारी रखी जाएगी जब तक कि उपस्थित सभी गवाहों की जांच नहीं हो जाती। "उक्त कठोर नियम का एकमात्र अपवाद यह है कि यदि न्यायालय को लगता है कि "अगले दिन से आगे स्थगन आवश्यक है" तो उसे दिया जा सकता है जिसके लिए न्यायालय पर एक शर्त लगाई जाती है कि वही दर्ज किया जाना चाहिए।** यहां तक कि जब गवाह अदालत के समक्ष उपस्थित होते हैं तो इस शिथिलता को भी हटा दिया जाता है। ऐसी स्थिति में न्यायालय को मामले को स्थगित करने की कोई शक्ति नहीं दी जाती है, सिवाय उस चरम आकस्मिकता के जिसके लिए उप-धारा (2) के दूसरे परंतुक ने एक और शर्त लगाई है,

"बशर्ते कि जब गवाह उपस्थित हों, तो बिना जाँच किए कोई विलम्ब या स्थगन नहीं दिया जाएगा। उन्हें, लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले विशेष कारणों को छोड़कर।

(जोर दिया गया)

**12.** इस प्रकार, कानूनी स्थिति यह है कि एक बार गवाहों की जांच शुरू होने के बाद, अदालत को दिन-प्रतिदिन मुकदमा जारी रखना पड़ता है जब तक कि उपस्थित सभी गवाहों की जांच नहीं हो जाती (सिवाय उन लोगों के जिन्हें पक्ष ने थोड़ा दिया है)। **न्यायालय को उक्त मार्ग से हटने के कारण दर्ज करने होते हैं। यहां तक कि यह तब भी वर्जित है जब गवाह अदालत में मौजूद होते हैं, क्योंकि तब आवश्यकता यह होती है कि अदालत को उनकी जांच करनी होती है। केवल तभी जब स्थगन के आदेश में "विशेष कारण" हों, किन कारणों को जगह मिलनी चाहिए, केवल वही अदालत को अदालत में मौजूद गवाहों की परीक्षा के बिना मामले को स्थगित करने का अधिकार क्षेत्र प्रदान कर सकता है।**

(जोर दिया गया)

**दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 465**

**"465. निष्कर्ष या सजा जब त्रुटियां, चूक या अनियमितता के कारण वापस लिया जाने वाला:-**

(1) यहाँ पहले निहित प्रावधानों के अधीन रहते हुए, सक्षम क्षेत्राधिकार के न्यायालय द्वारा पारित किसी भी निष्कर्ष, सजा या आदेश को अपील न्यायालय द्वारा उलट या परिवर्तित नहीं किया जाएगा, शिकायत में किसी भी त्रुटियां, चूक या अनियमितता के कारण पुनरीक्षण की पुष्टि, समन, वारंट, घोषणा, आदेश, निर्णय या परीक्षण से पहले या उसके दौरान या इस संहिता के तहत किसी भी जांच या अन्य कार्यवाही में, या अभियोजन के लिए किसी भी मंजूरी में कोई त्रुटियां या अनियमितता, जब तक कि उस न्यायालय की राय में, न्याय की विफलता वास्तव में इसके कारण नहीं हुई है।

(2) यह अवधारित करने में कि क्या इस संहिता के अधीन किसी कार्यवाही में कोई त्रुटियां, चूक या अनियमितता या अभियोजन के लिए किसी मंजूरी में कोई त्रुटियां या अनियमितता न्याय की विफलता का कारण बनी है, न्यायालय इस तथ्य को ध्यान में रखेगा कि क्या आपत्ति कार्यवाही के प्रारंभिक चरण में उठाई जा सकती थी और होनी चाहिए थी।

25. यह प्रावधान निचली अदालत के फैसले को बरकरार रखने के लिए है, यहां तक कि ऐसे मामले में भी जहां प्रक्रिया में स्पष्ट अनियमितता है। यदि उपलब्ध साक्ष्य पर न्यायालय द्वारा विधिवत ध्यान दिया गया है, तो इस तरह के निर्णय को केवल तकनीकी त्रुटियां के कारण उलट नहीं किया जा सकता है। यह इस सिद्धांत पर आधारित है कि एक प्रक्रियात्मक कानून न्याय की सहायक होती है। हालाँकि, अंतिम मुद्दा यह है कि क्या इस तरह की त्रुटियां या चूक ने न्याय की विफलता का गठन किया है, जो कि एक तथ्य है, जिसे पूर्वाग्रह की कसौटी पर तय किया जाना है।

26. यदि अपीलीय न्यायालय का विचार है कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के महत्वपूर्ण प्रावधानों का निरंतर गैर-अनुपालन हो रहा है तो दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 465 की कठोरता लागू नहीं होगी और उस मामले में रिमांड का आदेश उचित होगा।

**मध्य प्रदेश राज्य बनामभुराजी, (2001) 7 एस. सी. सी. 679**

**"15.** इस धारा के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि मुकदमे से पहले या मुकदमे के दौरान या किसी जांच के दौरान की गई कार्यवाहियों में त्रुटियां, चूक या अनियमितता को विधायिका द्वारा आपराधिक न्यायालयों में संभव घटनाओं के रूप में माना गया था। फिर भी विधायिका ने कार्यवाही को बंद करने या पूरी कार्यवाही को नए सिरे से दोहराने के निर्देश को अस्वीकार कर दिया। इसलिए, विधायिका ने एक निषेध लागू किया कि जब तक **चूक या अनियमितता ने "न्याय की विफलता" का कारण बना दिया है, उच्च न्यायालय केवल ऐसी त्रुटियां, चूक या अनियमितता के आधार पर कार्यवाही को रद्द नहीं करेगा।**

**16. इस तरह की त्रुटियां, चूक या अनियमितता के कारण "न्याय की विफलता" का क्या अर्थ है? इस न्यायालय ने शमनसाहब एम. मुलतानी बनाम कर्नाटक राज्य [(2001) 2 एस. सी. सी. 577 में टिप्पणी की हैः 2001 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 358] इस प्रकारः(एस. सी. सी. पृष्ठ 585, पैरा 23)**

> **"23. हम अक्सर 'न्याय की विफलता' के बारे में सुनते हैं और अक्सर आपराधिक अदालत में प्रस्तुतिकरण को उक्त अभिव्यक्ति के साथ जोड़ा जाता है। शायद यह बहुत अधिक लचीली या आसान अभिव्यक्ति है जो किसी भी मामले की किसी भी स्थिति में फिट हो सकती है। अभिव्यक्ति 'न्याय की विफलता' कभी-कभी एक व्युत्पत्ति संबंधी गिरगिट के रूप में दिखाई देती है (उपमा लॉर्ड डिप्लॉक से टाउन इन्वेस्टमेंट्स लिमिटेड बनाम् पर्यावरण विभाग [(1977) 1 सभी ई. आर. 813:1978 एसी 359:(1977) 2 डब्ल्यूएलआर 450 (एचएल)])। आपराधिक अदालत, विशेष रूप से उच्च न्यायालय को यह पता लगाने के लिए एक बारीकी से जांच करनी चाहिए कि क्या वास्तव में न्याय की विफलता थी या क्या यह केवल एक छलावा है।**

(जोर दिया गया)

**दरबार सिंह बनाम पंजाब राज्य, (2012) 10 एस. सी. सी. 476**

**21.** ***"न्याय की विफलता एक अत्यंत लचीली या आसान अभिव्यक्ति है, जिसे किसी भी मामले में किसी भी स्थिति में फिट किया जा सकता है। अदालत को सच्चाई का पता लगाने का प्रयास करना चाहिए। "न्याय की विफलता" होगी; न***

***केवल अन्यायपूर्ण दोषसिद्धि से, बल्कि आवश्यक साक्ष्य प्रस्तुत प्रस्तुत में अन्यायपूर्ण विफलता के परिणामस्वरूप दोषियों को बरी प्रस्तुत से भी। बेशक, अभियुक्तों के अधिकारों को ध्यान में रखा जाना चाहिए और उनकी रक्षा भी की जानी चाहिए, लेकिन उन पर इस हद तक अधिक जोर नहीं दिया जाना चाहिए कि वे भूल जाएं कि पीड़ितों के भी अधिकार हैं। यह दिखाना होगा कि अभियुक्त को भारतीय आपराधिक न्यायशास्त्र के तहत उपलब्ध सुरक्षा के संबंध में कुछ अक्षमता या हानि का सामना करना पड़ा है। "पूर्वाग्रह "अपने सामान्य अर्थों में व्याख्या करने में असमर्थ है और आपराधिक न्यायशास्त्र पर लागू होता है। पूर्वाग्रह की याचिका जांच या मुकदमे के संबंध में होनी चाहिए, न कि उनके दायरे से बाहर आने वाले मामलों के संबंध में। एक बार जब अभियुक्त यह दिखाने में सक्षम हो जाता है कि इन पहलुओं में से किसी एक के संबंध में उसके प्रति गंभीर पूर्वाग्रह पैदा हुआ है, और वह उसी ने आपराधिक न्यायशास्त्र के तहत उसके लिए उपलब्ध अधिकारों को पराजित कर दिया है, फिर आरोपी अदालत के आदेशों के तहत लाभ ले सकता है।*** (रफीक अहमद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [(2011) 8 एस. सी. सी. 300:(2011) 3 एस. सी. सी. (सी. आर. आई) 498:ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 3114], एस. सी. सी. पी.320, पैरा 36; रतिराम बनाम एम. पी. राज्य [(2012) 4 एस. सी. सी. 516:(2012) 2 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 481] और भीमन्ना बनाम कर्नाटक राज्य [(2012) 9 एस. सी. सी. 650]।)"

(जोर दिया गया)

**कोट्टय्या बनाम सम्राट, ए. आई. आर. (34) 1947 प्रिवी काउंसिल 67**

"[7] इस आधार पर भी, अभियुक्त की ओर से श्री प्रिट ने तर्क दिया है कि दंड प्रक्रिया संहिता के प्रत्यक्ष और महत्वपूर्ण प्रावधान के उल्लंघन को ठीक नहीं किया जा सकता है, लेकिन इससे दोषसिद्धि को रद्द किया जाना चाहिए। दूसरी ओर, क्राउन का तर्क है कि प्रश्नगत नोट-बुक प्रस्तुत प्रस्तुत में विफलता केवल कार्यवाही में एक अनियमितता के बराबर है जिसे धारा 537 आपराधिक पी. सी. के प्रावधानों के तहत ठीक किया जा सकता है यदि अदालत का समाधान हो जाता है कि ऐसी अनियमितता वास्तव में न्याय की विफलता का

कारण नहीं है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि भारत में ऐसे अधिकारी हैं जो श्री प्रिट के तर्क का कुछ समर्थन करते हैं, और 49 सभी 475 का संदर्भ दिया जा सकता है। [('27) 49 सभी। 475:14 ए. आई. आर. 1927 सभी 350:100 आई. सी. 371, तिर्का बनाम नानक], जिसमें अदालत ने यह विचार व्यक्त किया कि धारा 537, आपराधिक पी. सी., केवल अनजाने में उत्पन्न होने वाली प्रक्रिया की त्रुटियों पर लागू होती है, न कि संहिता के अनिवार्य प्रावधानों की अवहेलना या अवज्ञा के मामलों पर, और 45 मैड पर। 820 [('22) 45 पागल। 820:9 ए. आई. आर. 1922 पागल। 512:71 आई. सी. 252, इन रे मदुरा मुथु वन्नियन।], जिसमें यह विचार व्यक्त किया गया था कि धारा 342, आपराधिक पी. सी. के तहत अभियुक्त की जांच करने में कोई विफलता मुकदमे की वैधता के लिए घातक थी और धारा 537 के तहत इसे ठीक नहीं किया जा सकता था। उनके लॉर्डशिप्स की राय में यह तर्क धारा 537 के संचालन के बहुत संकीर्ण दृष्टिकोण पर आधारित है। **<u>एक परीक्षण 28 आई. ए. 257 [('01) 28 आई. ए. 257 में संहिता द्वारा निर्धारित तरीके से अलग तरीके से आयोजित किया जाता हैः25 मद्रास 61:8 एस ए आर 160 (पी. सी.), सुब्रमण्य अय्यर बनाम सम्राट], मुकदमा खराब है, और अनियमितता को ठीक करने का कोई सवाल ही नहीं उठता। लेकिन यदि परीक्षण संहिता द्वारा निर्धारित तरीके से किया जाता है, लेकिन ऐसे आचरण के दौरान कुछ अनियमितताएं होती हैं, तो अनियमितता को धारा 537 के तहत ठीक किया जा सकता है, और इससे कम नहीं क्योंकि अनियमितता में, जैसा कि लगभग हमेशा मामला होना चाहिए, संहिता के एक या अधिक व्यापक प्रावधानों का उल्लंघन शामिल है। भारत में कई मामलों में अवैधता और अनियमितता के बीच जो अंतर किया गया है, वह एक प्रकार का नहीं बल्कि एक डिग्री का है।</u>** यह दृश्य पाता है 5 रंग में उनके लॉर्डशिप बोर्ड के निर्णय में समर्थन।53 [('26) 5 रंग।53 :14 ए. आई. आर. 1927 पी. सी. 44:54 आई. ए. 96:100 आई. सी. 227 (पी. सी.), अब्दुल रहमान बनाम सम्राट], जहां एस. एस. का पालन करने में विफलता। 360, क्रिमिनल पी. सी., को एस. एस. द्वारा ठीक किया गया था। 535 और 537।वर्तमान मामला धारा 537 के तहत आता है, और उनके लॉर्डशिप धारा 162 के उल्लंघन के बावजूद मुकदमे को वैध मानते हैं।

(जोर दिया गया)

**<u>पुनः परीक्षण</u>**

**<u>दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 386</u>**

**"386. अपीलीय न्यायालय की शक्तियाँ।**–इस तरह के रिकॉर्ड अभिलेख को देखने के बाद और अपीलार्थी या उसके वकील की सुनवाई करते हुए, यदि वह उपस्थित होता है, और लोक अभियोजक की सुनवाई करते हुए, यदि वह उपस्थित होता है, और धारा 377 या धारा 378 के तहत अपील के मामले में, यदि आरोपी उपस्थित होता है, तो अपील न्यायालय, यदि यह समझता है कि हस्तक्षेप करने के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं है, तो अपील को खारिज कर सकता है, या-

(ए) बरी किए जाने के आदेश की अपील में, ऐसे आदेश को उलट दें और निर्देश दें कि आगे की जांच की जाए, या आरोपी पर फिर से मुकदमा चलाया जाए या मुकदमा चलाया जाए, जैसा भी मामला हो, या उसे दोषी पाया जाए और उसे कानून के अनुसार सजा सुनाई जाए;

(बी) दोषसिद्धि की अपील में-

(i) निष्कर्ष और सजा को उलट देना और अभियुक्त को बरी या आरोपमुक्त करना, या उसे ऐसे अपीलीय न्यायालय के अधीनस्थ सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय द्वारा फिर से मुकदमा चलाने का आदेश देना या मुकदमा चलाने के लिए प्रतिबद्ध होना, या

(ii) निष्कर्ष में परिवर्तन करना, वाक्य को बनाए रखना, या

(iii) निष्कर्ष के साथ या उसमें परिवर्तन किए बिना, वाक्य की प्रकृति या विस्तार, या प्रकृति और विस्तार में परिवर्तन करें, लेकिन इसे बढ़ाने के लिए नहीं -

(सी) सजा में वृद्धि के लिए अपील में-

(i) निष्कर्ष और सजा को उलट दें और आरोपी को बरी या आरोपमुक्त कर दें या उसे अपराध का मुकदमा चलाने के लिए सक्षम अदालत द्वारा फिर से मुकदमा चलाने का आदेश दें, या

(ii) वाक्य को बनाए रखते हुए निष्कर्ष में परिवर्तन करें, या

(iii) निष्कर्ष के साथ या उसमें परिवर्तन किए बिना, वाक्य की प्रकृति या विस्तार, या प्रकृति और विस्तार में परिवर्तन करें, ताकि उसे बढ़ाया या घटाया जा सके।

(डी) किसी अन्य आदेश की अपील में, ऐसे आदेश को परिवर्तित या उलट दें;

(ई) कोई संशोधन या कोई परिणामी या आनुषंगिक आदेश करना जो न्यायसंगत या उचित हो सकता हैः

बशर्ते कि सजा तब तक नहीं बढ़ाई जाएगी जब तक कि अभियुक्त को ऐसी वृद्धि के खिलाफ कारण दिखाने का अवसर न मिला होः

बशर्ते कि अपीलीय न्यायालय उस अपराध के लिए अधिक सजा नहीं देगा जो उसकी राय में अभियुक्त के पास अपील के तहत आदेश या सजा पारित करने वाले न्यायालय द्वारा उस अपराध के लिए लगाए गए अपराध से अधिक।.

27. अपीलीय न्यायालय के पास पुनः सुनवाई का निर्देश देने के लिए पर्याप्त शक्ति है। हालाँकि, इस तरह की शक्ति का प्रयोग असाधारण मामलों में किया जाना है। पाई गई अनियमितताएं इतनी भौतिक होनी चाहिए कि फिर से मुकदमा चलाना ही एकमात्र विकल्प हो। दूसरे शब्दों में, कानून के आदेश का पालन करने में विफलता से पूरे मुकदमे को दूषित करने वाला गंभीर पूर्वाग्रह पैदा होना चाहिए, जिसे फिर से मुकदमे के अलावा ठीक नहीं किया जा सकता है। एक बार इस तरह के पुनः मुकदमे का आदेश दिए जाने के बाद, प्रभाव यह होगा कि अदालत द्वारा दर्ज की गई सभी कार्यवाहियां समाप्त हो जाएंगी, जिससे एक नए मुकदमे की शुरुआत होगी, जिसमें गवाहों की जांच शामिल है।

**नसीब सिंह बनाम पंजाब राज्य, (2022) 2 एससीसी 89**

"33. पुनः विचारण पर इस न्यायालय के निर्णयों से जो सिद्धांत उभरते हैं, उन्हें निम्नानुसार तैयार किया जा सकता हैः

33.1. अपीलीय न्यायालय न्याय की विफलता को रोकने के लिए केवल "असाधारण" परिस्थितियों में ही पुनः विचारण का निर्देश दे सकता है।

33.2. जांच में केवल खामियां पुनः मुकदमे के लिए निर्देश देने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। केवल तभी जब खामियां इतनी गंभीर हों कि पक्षों के अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े, तो फिर से सुनवाई का निर्देश दिया जा सकता है।

33.3. इस बात का निर्धारण कि क्या एक "घटिया" जांच/मुकदमे ने पक्ष को पूर्वाग्रहित किया है, साक्ष्य के गहन अध्ययन के अनुसार प्रत्येक मामले के तथ्यों पर आधारित होना चाहिए।

33.4. यह पर्याप्त नहीं है यदि अभियुक्त/अभियोजन पक्ष चेहरे पर यह तर्क देता है कि न्याय की विफलता हुई है जिससे पुनः मुकदमे की आवश्यकता है। अपीलीय न्यायालय पर यह दायित्व है कि वह साक्ष्य और जांच प्रक्रिया के संदर्भ में न्याय की विफलता की प्रकृति पर एक तर्कपूर्ण आदेश प्रदान करने के लिए एक पुनर्विचार का निर्देश दे।

33.5. यदि किसी मामले को फिर से सुनवाई के लिए निर्देशित किया जाता है, तो पिछले मुकदमे के साक्ष्य और रिकॉर्ड अभिलेख पूरी तरह से मिटा दिए जाते हैं।

33.6. निम्नलिखित कुछ उदाहरण हैं, जिनका संपूर्ण होने का इरादा नहीं है, जब न्यायालय न्याय की विफलता के आधार पर पुनः मुकदमे का आदेश दे सकता हैः

(ए) निचली अदालत ने अधिकार क्षेत्र के अभाव में मुकदमा चलाया है;

(बी) कार्यवाही की प्रकृति की गलत धारणा के आधार पर अवैधता या अनियमितता से मुकदमा दूषित हो गया है; और

(सी) अभियोजक को आरोप की प्रकृति के संबंध में साक्ष्य प्रस्तुत करने से अक्षम या रोका गया है, जिसके परिणामस्वरूप मुकदमे को प्रहसन, छल या छल के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

**<u>सजा</u>**

*"यदि पूरी तरह से आपराधिक कानून न्यायशास्त्र का सिंड्रेला/उपेक्षिता है, तो सजाए कानून सिंड्रेला को नाजायज बच्चा है।"*

*नाइजल वॉकर*

*ब्रिटीश अपराधविज्ञानी*

*एक तर्कसंगत समाज में सजा 1 (1969)*

**<u>दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 235</u>**

**"235. दोषमुक्त या दोषसिद्धि का निर्णय:-**

(1) दलीलों और कानून के बिंदुओं (यदि कोई हो) को सुनने के बाद, न्यायाधीश मामले में निर्णय देगा।

(2) यदि अभियुक्त दोषी ठहराया जाता है, तो न्यायाधीश, जब तक कि वह धारा 360 के प्रावधानों के अनुसार आगे नहीं बढ़ता है, अभियुक्त को सजा के प्रश्नों पर सुनेगा, और फिर उसे कानून के अनुसार सजा देगा।

**<u>दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 360</u>**

**"360. अच्छे आचरण के परिवीक्षा पर या चेतावनी के बाद रिहा करने का आदेश।**

(1) जब 21 वर्ष से कम आयु का कोई व्यक्ति केवल जुर्माने या सात वर्ष या उससे कम अवधि के कारावास से दंडनीय अपराध के लिए दोषी ठहराया जाता है, या जब 21 वर्ष से कम आयु का कोई व्यक्ति या कोई महिला किसी ऐसे अपराध के लिए दोषी ठहराया जाता है जो मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय नहीं है, और अपराधी के खिलाफ कोई पूर्व दोषसिद्धि साबित नहीं होती है, यदि यह उस न्यायालय को दिखाई देता है जिसके समक्ष वह दोषी ठहराया गया है, तो अपराधी की आयु, चरित्र या पूर्ववृत्तियों और उन परिस्थितियों के संबंध में जिसमें अपराध किया गया था, कि यह समीचीन है कि अपराधी को अच्छे आचरण की परिवीक्षा पर रिहा किया जाना चाहिए। न्यायालय, उसे तुरंत किसी दंड की सजा सुनाने के बजाय, यह निर्देश दे सकता है कि उसे जमानत के साथ या उसके बिना बांड में प्रवेश करने पर रिहा किया जाए, ताकि वह ऐसी अवधि (तीन वर्ष से अधिक नहीं) के दौरान उपस्थित हो सके और सजा प्राप्त कर सके जब न्यायालय निर्देश दे और इस बीच शांति बनाए रखे और अच्छा व्यवहार करेः

बशर्ते कि जहां किसी प्रथम अपराधी को उच्च न्यायालय द्वारा विशेष रूप से सशक्त नहीं किए गए द्वितीय श्रेणी के मजिस्ट्रेट दंडाधिकारी द्वारा दोषी ठहराया जाता है, और दंडाधिकारी की राय है कि इस धारा द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग किया जाना चाहिए, तो वह उस आशय के लिए अपनी राय दर्ज करेगा, और अभियुक्त को ऐसे दंडाधिकारी के पास भेजने या उसके सामने पेश होने के लिए जमानत लेने के लिए प्रथम श्रेणी के दंडाधिकारी को कार्यवाही प्रस्तुत करेगा, जो उप-धारा (2) द्वारा प्रदान की गई तरीके से मामले का निपटारा करेगा।

(2) जहाँ उप-धारा (1) द्वारा उपबंधित प्रथम श्रेणी के दंडाधिकारी को कार्यवाहियाँ प्रस्तुत की जाती हैं, वहाँ ऐसा दंडाधिकारी उस पर ऐसा दंडादेश पारित कर सकता है या ऐसा आदेश दे सकता है जो वह पारित कर सकता था या कर सकता था यदि मामले की मूल रूप से उसके द्वारा सुनवाई की गई थी, और यदि वह समझता है कि किसी बिंदु पर आगे की जाँच या अतिरिक्त साक्ष्य आवश्यक है, तो वह ऐसी जाँच कर सकता है या ऐसा साक्ष्य स्वयं ले सकता है या ऐसी जाँच या साक्ष्य बनाने या लेने का निर्देश दे सकता है।

(3) किसी भी मामले में जिसमें किसी व्यक्ति को चोरी, किसी भवन में चोरी, बेईमान दुरुपयोग, धोखाधड़ी या भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) के तहत किसी भी अपराध के लिए दोषी ठहराया जाता है, जो दो साल से अधिक के कारावास से दंडनीय नहीं है या केवल जुर्माने से दंडनीय कोई अपराध है और उसके खिलाफ कोई पूर्व दोषसिद्धि साबित नहीं होती है, जिस न्यायालय के समक्ष वह इस तरह से दोषी ठहराया जाता है, वह अपराधी की उम्र, चरित्र, पूर्ववृत्तियों या शारीरिक या मानसिक स्थिति और अपराध की तुच्छ प्रकृति या किसी भी विस्तारित परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, जिसे अपराध किया गया था, उसे किसी भी सजा की सजा देने के बजाय, यदि वह उचित समझता है। उचित चेतावनी के बाद उसे रिहा कर दें।

(4) इस धारा के तहत कोई आदेश किसी भी अपीलीय न्यायालय या उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय द्वारा अपनी पुनरीक्षण की शक्तियों का प्रयोग करते समय दिया जा सकता है।

(5) जब किसी अपराधी के संबंध में इस धारा के तहत कोई आदेश दिया गया हो, तो उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय, अपील करने पर जब ऐसे न्यायालय में अपील करने का अधिकार हो, या अपनी पुनरीक्षण की शक्तियों का प्रयोग करते हुए, ऐसे आदेश को रद्द कर सकता है, और उसके बदले में ऐसे अपराधी को कानून के अनुसार सजा दे सकता हैः

बशर्ते कि उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय इस उप-धारा के तहत उस न्यायालय द्वारा दी गई सजा से अधिक बड़ी सजा नहीं देगा जिसके द्वारा अपराधी को दोषी ठहराया गया था।

(6) धारा 121,124 और 373 के प्रावधान, जहां तक लागू हो सके, इस धारा के प्रावधानों के अनुसरण में दी गई प्रतिभूतियों के मामले में लागू होंगे।

(7) अदालत, उप-धारा (1) के तहत एक अपराधी की रिहाई का निर्देश देने से पहले संतुष्ट होगी कि एक अपराधी या उसकी जमानत (यदि कोई हो) का उस स्थान पर निवास या नियमित व्यवसाय का एक निश्चित स्थान है जिसके लिए अदालत कार्य करती है या जिसमें शर्तों के पालन के लिए नामित अवधि के दौरान जीने की संभावना है।

(8) यदि वह न्यायालय जिसने अपराधी को दोषी ठहराया था, या कोई न्यायालय जो अपराधी के साथ उसके मूल अपराध के संबंध में व्यवहार कर सकता था, संतुष्ट है कि अपराधी अपनी पहचान की किसी भी शर्त का पालन करने में विफल रहा है, तो वह उसकी आशंका के लिए वारंट जारी कर सकता है।

(9) एक अपराधी, जब ऐसे किसी वारंट पर पकड़ा जाता है, तो उसे वारंट जारी करने वाले न्यायालय के समक्ष तुरंत लाया जाएगा, और ऐसा न्यायालय या तो उसे तब तक हिरासत में भेज सकता है जब तक कि मामले की सुनवाई नहीं हो जाती है या उसे सजा के लिए उपस्थित होने पर पर्याप्त मुचलके के साथ जमानत पर स्वीकार कर सकता है और ऐसा न्यायालय मामले की सुनवाई के बाद सजा सुना सकता है।

(10) इस धारा की कोई भी बात अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 (1958 का 20), या बाल अधिनियम, 1960 (1960 का 60), या युवा अपराधियों के उपचार, प्रशिक्षण या पुनर्वास के लिए उस समय लागू किसी अन्य कानून के प्रावधानों को प्रभावित नहीं करेगी।

**<u>अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 3</u>**

**“3. चेतावनी के बाद कुछ अपराधियों को रिहा करने की अदालत की शक्ति।-**

जब कोई व्यक्ति भारतीय दंड संहिता की धारा 379 या धारा 380 या धारा 381 या भारतीय दंड संहिता की धारा 404 या धारा 420 (1860 का 45) के तहत दंडनीय अपराध करने या भारतीय दंड संहिता या किसी अन्य कानून के तहत दो साल से अधिक के कारावास या जुर्माने या दोनों से दंडनीय अपराध करने का दोषी पाया जाता है और उसके खिलाफ कोई पूर्व दोषसिद्धि साबित नहीं होती है और जिस अदालत द्वारा व्यक्ति को दोषी पाया जाता है, उसकी राय है कि अपराध की प्रकृति और अपराधी के चरित्र सहित मामले की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए ऐसा करना समीचीन है। तब, उस समय लागू किसी अन्य कानून में कुछ भी निहित होने के बावजूद, अदालत उसे किसी

भी सजा की सजा देने या तारीख को रिहा करने के बजाय उसे धारा 4 के तहत अच्छे आचरण की परिवीक्षा, उचित चेतावनी के बाद उसे रिहा कर सकती है।

*स्पष्टीकरण।*–इस धारा के प्रयोजनों के लिए, किसी व्यक्ति के खिलाफ पूर्व दोषसिद्धि में इस धारा या धारा 4 के तहत उसके खिलाफ किया गया कोई पूर्व आदेश शामिल होगा।

**<u>अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 4</u>**

**"4. अच्छे आचरण के परिवीक्षा पर कुछ अपराधियों को रिहा करने की अदालत की शक्ति।**

(1) जब कोई व्यक्ति ऐसा अपराध करने का दोषी पाया जाता है जो मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय नहीं है और अदालत जिसके द्वारा वह व्यक्ति दोषी पाया जाता है, की राय है कि अपराध की प्रकृति और अपराधी के चरित्र सहित मामले की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, उसे अच्छे आचरण की परिवीक्षा पर रिहा करना समीचीन है, तो, उस समय लागू किसी अन्य कानून में कुछ भी निहित होने के बावजूद, अदालत उसे तुरंत किसी भी सजा की सजा देने के बजाय निर्देश दे सकती है कि उसे मुचलके में प्रवेश करने पर, जमानत के साथ या बिना जमानत के, उपस्थित होने और सजा प्राप्त करने का निर्देश दिया जाए जब उस दौरान बुलाया जाए जो अवधि, तीन वर्ष से अधिक नहीं हो, जैसा कि न्यायालय निर्देश दे सकता है, और इस बीच शांति बनाए रखने और अच्छे आचरण का पालन करने के लिए। बशर्ते कि अदालत किसी अपराधी की ऐसी रिहाई का निर्देश तब तक नहीं देगी जब तक कि यह संतुष्ट न हो जाए कि अपराधी या उसकी जमानत, यदि कोई हो, का उस स्थान पर निवास या नियमित व्यवसाय का एक निश्चित स्थान है जिस पर अदालत अधिकारिता का

प्रयोग करती है या जिसमें अपराधी के उस अवधि के दौरान रहने की संभावना है जिसके लिए वह बांड में प्रवेश करता है।

(2) उप-धारा (1) के तहत कोई आदेश देने से पहले, न्यायालय मामले के संबंध में संबंधित परिवीक्षा अधिकारी की रिपोर्ट, यदि कोई हो, पर विचार करेगा।

(3) जब उप-धारा (1) के तहत कोई आदेश दिया जाता है, तो अदालत, यदि यह राय है कि अपराधी और जनता के हित में ऐसा करना समीचीन है, तो इसके अलावा एक पर्यवेक्षण आदेश पारित कर सकती है जिसमें निर्देश दिया गया है कि अपराधी उस अवधि के दौरान आदेश में नामित एक परिवीक्षा अधिकारी की देखरेख में रहेगा, जो एक वर्ष से कम नहीं है, जैसा कि उसमें निर्दिष्ट किया जा सकता है, और ऐसे पर्यवेक्षण आदेश में ऐसी शर्तें लागू कर सकता है जो वह अपराधी के उचित पर्यवेक्षण के लिए आवश्यक समझता है।

(4) उप-धारा (3) के तहत पर्यवेक्षण आदेश देने वाले न्यायालय से अपराधी को रिहा करने से पहले, प्रतिभू के साथ या उसके बिना, ऐसे आदेश में निर्दिष्ट शर्तों और निवास, मादक पदार्थों से परहेज या किसी अन्य मामले के संबंध में ऐसी अतिरिक्त शर्तों का पालन करने के लिए एक मुचलके में प्रवेश करने की आवश्यकता होगी जो अदालत, विशेष परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, अपराधी द्वारा एक ही अपराध की पुनरावृत्ति या अन्य अपराध करना।

(5) उप-धारा (3) के तहत पर्यवेक्षण आदेश देने वाला न्यायालय अपराधी को आदेश के नियमों और शर्तों के बारे में बताएगा और प्रत्येक अपराधी, प्रतिभू, यदि कोई हो, और संबंधित परिवीक्षा अधिकारी को पर्यवेक्षण आदेश की एक प्रति तुरंत प्रस्तुत करेगा।

**<u>अपराधी परिवीक्षा अधिनियम 1958 की धारा 6</u>**

**"6. 21 वर्ष से कम आयु के अपराधियों के कारावास पर प्रतिबंध।**

(1) जब 21 वर्ष से कम आयु का कोई व्यक्ति कारावास (लेकिन आजीवन कारावास से नहीं) से दंडनीय अपराध करने का दोषी पाया जाता है, तो वह न्यायालय जिसके द्वारा वह व्यक्ति दोषी पाया जाता है, उसे कारावास की सजा नहीं देगा, जब तक कि यह संतुष्ट नहीं हो जाता है कि अपराध की प्रकृति और अपराधी के चरित्र सहित मामले की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, उसके साथ धारा 3 या धारा 4 के तहत व्यवहार करना वांछनीय नहीं होगा, और यदि अदालत अपराधी को कारावास की कोई सजा देती है, तो वह ऐसा करने के लिए अपने कारणों को दर्ज करेगी।

(2) स्वयं को संतुष्ट करने के उद्देश्य से कि क्या धारा 3 या धारा 4 के तहत उप-धारा (1) में निर्दिष्ट अपराधी के साथ व्यवहार करना वांछनीय नहीं होगा, न्यायालय परिवीक्षा अधिकारी से एक रिपोर्ट मांगेगा और रिपोर्ट, यदि कोई हो, और अपराधी के चरित्र और शारीरिक और मानसिक स्थिति से संबंधित उसके पास उपलब्ध किसी भी अन्य जानकारी पर विचार करेगा।

28. एक दोषी को सजा देने से पहले, दोषसिद्धि प्रदान करने के बाद, न्यायाधीश दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 360 के प्रावधानों के अनुसार कार्यवाही की व्यवहार्यता पर विचार करेगा, जो एक दोषी को अच्छे आचरण की परिवीक्षा पर या चेतावनी के बाद रिहा करने की बात करता है। सुधारात्मक पहलू से संबंधित एक लाभकारी प्रावधान होने के कारण, यह न्यायाधीश का बाध्यकारी कर्तव्य है कि वह सजा पर अभियुक्त की सुनवाई करने के लिए आगे बढ़ने से पहले इस प्रावधान के अनुप्रयोग पर विचार करे। ऐसा करते समय, न्यायाधीश के पास अभियुक्त और

अभियोजन पक्ष को सुनना। इसी तरह, न्यायालय को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 (इसके बाद **"अधिनियम, 1958"** के रूप में संदर्भित) की धारा 3,4 और 6 के तहत निहित मुख्य प्रावधानों को लागू करना होगा। यदि किसी अपराध को समाज के खिलाफ एक कार्य माना जाता है, तो परिणामी कार्रवाई अकेले प्रतिशोधात्मक नहीं हो सकती है, क्योंकि सुधारात्मक भाग को समान महत्व दिए जाने की आवश्यकता है, यदि अधिक नहीं। अंतिम लक्ष्य अभियुक्त को पटरी पर वापस लाना है, एक बार फिर समाज का हिस्सा बनना है। दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 360 या अधिनियम, 1958 में अनिवार्य प्रावधानों को नजरअंदाज करने का कोई भी प्रयास उनके उद्देश्य को निरर्थक बना देगा। ऐसा लगता है कि सजा सुनाते समय इन प्रशंसनीय प्रावधानों को नजरअंदाज कर दिया गया है। अंतिम उद्देश्य भविष्य में इस तरह के अपराधों को रोकने का है। यह कभी भी अकेले प्रतिशोधात्मक उपाय से नहीं किया जा सकता है, क्योंकि आरोपी के कहने पर हृदय परिवर्तन अपराध के कार्य को रोकने का सबसे अच्छा तरीका है। इसलिए, हमारे मन में पूर्ण स्पष्टता है कि एक निचली अदालत सजा के प्रश्न को शुरू करने से पहले अधिनियम, 1958 की धारा 3,4 और 6 के साथ पठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 360 के अधिदेश का पालन करने के लिए कर्तव्यबद्ध है। इस संबंध में, हम ध्यान दे सकते हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 360 की उप-धारा (10) न्यायाधीश को अधिनियम, 1958 में निहित लाभकारी प्रावधानों की कठोरता की याद दिलाने का एक सचेत प्रयास करती है।

29. सजा पर अभियुक्त को सुनना अभियुक्त को दिया गया एक मूल्यवान अधिकार है। 47 के विपरीत वास्तविक महत्व केवल सजा के साथ दोषसिद्धी के विरूद्ध है। दुर्भाग्यवश, जब सजा सुनाने की बात आती है तो हमारे पास कोई स्पष्ट नीति या कानून नहीं होता है। वर्षों से, यह न्यायाधीश-केंद्रित हो गया है और सजा देने में असमानताएं स्वीकार की गई हैं।

30. हमारे जैसे देश में, दोषी व्यक्तियों को एक समान तरीके से दोषसिद्धि के अनुसार सजा देना भी प्रतिकूल होगा। जब सजा सुनाने की बात आती है, तो उम्र, लिंग, शिक्षा, घरेलू जीवन, सामाजिक पृष्ठभूमि, भावनात्मक और मानसिक स्थिति, जाति, धर्म और समुदाय जैसे विभिन्न कारक होते हैं जो बिगड़ती और कम करने वाली परिस्थितियों का गठन करते हैं।

31. ज्ञान और चरित्र में अंतर है। ज्ञान अर्जित किया जाता है, जबकि चरित्र का निर्माण होता है। व्यक्ति के चरित्र का निर्माण विभिन्न कारकों पर निर्भर करता है। अक्सर, एक दोषी का अपने चरित्र के निर्माण पर नियंत्रण नहीं होता है। यह लोगों के कुछ समूहों को विरासत में अपराध की ओर ले जाता है। इस संबंध में, हम प्रकृति से ही एक सादृश्य प्राप्त कर सकते हैं।जमीन पर गिरने से पहले बारिश का पानी वैसा ही रहता है। यह वह मिट्टी है जो पानी की प्रकृति को बदल देती है। वर्षा जल मिट्टी के स्वरूप में भाग लेता है, जिस पर इसका कोई नियंत्रण नहीं होता है।समस्याएँ बहुत जटिल हैं।

32. सजा सुनाने में न्यायाधीश का निर्णय व्यक्ति-दर-व्यक्ति अलग-अलग होता है। यह भी चरण-दर-चरण अलग-अलग होगा। यह मन द्वारा नियंत्रित होता है।एक न्यायाधीश का वातावरण और पालन-पोषण सजा तय करने में अंतिम मध्यस्थ बन जाएगा। एक समृद्ध पृष्ठभूमि से एक न्यायाधीश एक न्यायाधीश के खिलाफ एक विनम्र से अलग मानसिकता हो सकती है। एक महिला न्यायाधीश अपने पुरुष समकक्ष की तुलना में इसे अलग तरह से देख सकती है। एक अपीलीय न्यायालय अपने अनुभव के कारण सजा के साथ छेड़छाड़ कर सकता है, और संस्थागत बाधाओं जैसे बाहरी कारक खेल में आ सकते हैं। निश्चित रूप से, एक स्पष्ट सजा देने की

नीति की आवश्यकता है, जो कभी भी न्यायाधीश-केंद्रित नहीं होनी चाहिए क्योंकि समाज को एक सजा का आधार जानना पड़ता है।

33. सजा केवल एक लॉटरी नहीं होगी। यह घुटने टेकने की प्रतिक्रिया का परिणाम भी नहीं होगा। यह भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 14 और 21 के तहत प्रदत्त मौलिक अधिकारों का एक बहुत ही महत्वपूर्ण हिस्सा है। कोई भी अनुचित असमानता निष्पक्ष सुनवाई की अवधारणा के खिलाफ होगी और इसलिए न्याय के खिलाफ होगी।

34. निरोध, अक्षमता और सुधार जैसे विभिन्न तत्वों को सजा का हिस्सा बनाना चाहिए। विभिन्न समूहों के बीच समानता बनाए रखते हुए, विशेष रूप से सुधारात्मक पहलू को संबोधित करने के लिए सजा की अध्ययन जांच की एक अनिवार्य आवश्यकता है। शायद, दोहराए जाने वाले अपराधों की घटना पर भी बहुत अध्ययन की आवश्यकता है, जो कुछ समूहों के कारण हो सकते हैं। विशेष प्रकार के अपराधों और अपने स्वयं के समूह बनाने वाले अपराधियों के बीच सांठगांठ पर ध्यान दिया जाना चाहिए और उनका समाधान किया जाना चाहिए।

35. सहज ज्ञान युक्त सजा की अवधारणा कानून के शासन के खिलाफ है। एक न्यायाधीश को सजा देने में कोई दिशा-निर्देश दिए बिना, समाज के बारे में अपनी समझ के माध्यम से बनाई गई अपनी अंतरात्मा के आधार पर कभी भी अनियंत्रित और बेलगाम विवेकाधिकार नहीं हो सकता है। अवांछित असमानता से बचने के लिए सजा सुनाने के विवेक का प्रयोग करने के लिए पर्याप्त दिशानिर्देशों की आवश्यकता अत्यंत महत्वपूर्ण है।

36. अदालतें कम करने वाली और परेशान करने वाली परिस्थितियों को ध्यान में रखती हैं। जैसा कि हमने सचित्र रूप से देखा है, यह निर्धारित करने के लिए कोई शोध नहीं किया गया है कि कौन सी परिस्थितियाँ परेशान करने वाली और कम करने वाली हैं।

यद्यपि गंभीर परिस्थितियों पर निर्णय लेने में 'उचित संदेह से परे' मानक का पालन करना उचित होगा, लेकिन परिस्थितियों को कम करते समय 'संभावना संतुलन' मानक की आवश्यकता होती है। न्यायालय पूर्व-विचारण चरण के दौरान या तो कारावास में या अन्यथा दोषी के आचरण द्वारा भी निर्देशित हो सकते हैं। नामित प्राधिकारी से एक रिपोर्ट मंगाई जा सकती है। अंतिम विचार न्यायालय की ओर से विवेकाधिकार को समाप्त करना है, जो स्पष्ट रूप से असमानता की ओर ले जाता है।

37. जैसा कि हमने जिस मुद्दे पर चर्चा की है, हम समझते हैं कि यह एक अत्यंत जटिल मुद्दा है और यह राज्यों और भारत संघ का कर्तव्य है कि वे ऊपर चर्चा किए गए तीन अलग-अलग तरीकों पर विधिवत विचार करके स्थिति से निपटें। एक सचेत चर्चा इस मुद्दे पर एक सचेत चर्चा और बहस होनी चाहिए जिसके लिए विभिन्न विशेषज्ञों और हितधारकों से मिलकर सजा पर एक उपयुक्त आयोग के गठन की आवश्यकता हो सकती है। हम स्पष्ट रूप से "कानूनी बिरादरी के सदस्यों, मनोवैज्ञानिकों, समाजशास्त्रियों, अपराधविज्ञानी, अधिकारियों और विधायकों" का सुझाव देते हैं। सामाजिक अनुभव सही निष्कर्ष पर पहुँचने में सहायक सिद्ध होगा। वर्तमान में हमारे पास कानून के माध्यम से सजा का अधिरोपण है। स्पष्ट त्रुटियाँ और खामियाँ हैं, जिन्हें पिछली चर्चा में इंगित किया गया है। एक अदालत के लिए यह भी अनिवार्य हो सकता है कि सजा तय करने के उद्देश्य से आरोपी के आचरण और व्यवहार पर एक स्वतंत्र प्राधिकारी द्वारा मूल्यांकन किया जाए। इस न्यायालय द्वारा प्रस्तावित दिशा-निर्देशों पर भी विचार किया जा सकता है। इसमें एक सक्षम प्राधिकारी का निर्माण शामिल होगा जिसे एक रिपोर्ट और इसकी संरचना देने का काम सौंपा जाएगा।

**मनोज बनाम एमपी राज्य, (2023) 2 एससीसी 353**

“230. इसलिए, जब सजा देने के मामलों की बात आती है तो "पूर्ववर्ती" और "निरंतरता" की ताकत शायद सबसे कम होती है, जब तक कि यह वैधता की सीमा के भीतर है और जिसके परिणामस्वरूप "सैद्धांतिक सजा" दी जाती है। दूसरे शब्दों में, न्यायिक असंगति जब यह सजा से संबंधित होती है, तो वास्तव में एक नकारात्मक के बजाय एक सकारात्मक संकेतक होगा, *बशर्ते कि यह अभी भी "सैद्धांतिक" सजा की अच्छी तरह से परिभाषित रूपरेखा के भीतर है।* मृत्युदंड, व्यक्तिगत सजा पर पहुंचने के लिए विवेकाधिकार को प्रोत्साहित किया जाता है, लेकिन इसे "दुर्लभ से दुर्लभतम" सिद्धांत द्वारा बाधित किया जाना चाहिए, जिसमें अदालत अपराध की बढ़ती परिस्थितियों पर विचार करती है, और अपराधी की परिस्थितियों को कम करती है (एक "उदार और व्यापक" निर्माण), जो बदले में उनके विचार को सूचित करना चाहिए कि क्या आजीवन कारावास का विकल्प निर्विवाद रूप से एक असंभवता के कारण बंद कर दिया गया है [राजेंद्र प्रल्हादराव वासनिक बनाम महाराष्ट्र राज्य (2019) 12 एस. सी. सी. 460:(2019) 4 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 420 में "संभाव्यता" नहीं बल्कि "असंभवता" माना गया है।] सुधार के लिए।

xxx xxx xxx

233. इसलिए, "व्यक्तिगत, सैद्धांतिक सजा"-अपराध और आपराधिक दोनों के आधार पर, इस विचार के साथ कि क्या सुधार या पुनर्वास प्राप्त करने योग्य है (राजेंद्र में "संभावित" माना गया है)। राजेन्द्र प्रल्हादराव वासनिक बनाम् (राजेन्द्र प्रल्हादराव वासनिक बनाम् महाराष्ट्र राज्य, (2019) 12 एस एस सी 460 (2019) 4 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 420]), और इसके परिणामस्वरूप क्या आजीवन कारावास का विकल्प निर्विवाद रूप से बंद कर दिया गया है-"समानता" का एकमात्र कारक होना चाहिए जो मृत्युदंड से संबंधित निर्णयों से स्पष्ट होना चाहिए। स्वामी श्रद्धानंद (2) [स्वामी श्रद्धानंद (2) बनाम कर्नाटक राज्य, (2008) 13 एस. सी. सी. 767 में एक नई सजा की सीमा के निर्माण के साथः(2009) 3 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 113], और बाद में भारत संघ बनाम वी. श्रीहरण [भारत संघ बनाम वी. श्रीहरण, (2016) 7 एस. सी. सी. 1 में एक संविधान पीठ द्वारा पुष्टि की गईः(2016) 2 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 695], वैधानिक छूट के बिना आजीवन कारावास (यानी संविधान के

अनुच्छेद 72 और 161 अभी भी लागू हैं), मौत की सजा देने से पहले एक और विकल्प मौजूद है। हालाँकि, इस अवधारणा के खिलाफ गंभीर चिंता जताई गई है, क्योंकि इसे एक संकीर्ण बहुमत द्वारा बरकरार रखा गया था, और एक उचित समय पर विचार करने के लिए छोड़ दिया गया है।

xxx xxx xxx

***कम करने वाली परिस्थितियों को इकट्ठा करने के लिए व्यावहारिक दिशानिर्देश***

248. यह सुनिश्चित करने की तत्काल आवश्यकता है कि अपराध की क्रूरता के प्रति प्रतिशोधात्मक प्रतिक्रिया में फिसलने से बचने के लिए परीक्षण चरण में कम करने वाली परिस्थितियों पर विचार किया जाए, जैसा कि अपीलीय चरण तक पहुंचने वाले अधिकांश मामलों में स्थिति है।

249. ऐसा करने के लिए, निचली अदालत को अभियुक्त और राज्य दोनों से जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। राज्य को-मृत्युदंड देने वाले अपराध के लिए-उचित स्तर पर, ऐसी सामग्री पेश करनी चाहिए जो अधिमानतः पहले से एकत्र की गई हो, सत्र न्यायालय के समक्ष आरोपी के मनोरोग और मनोवैज्ञानिक प्रस्तुत्यांकन का खुलासा करते हुए। यह अपराध करने के समय आरोपी व्यक्ति की मानसिक स्थिति (या मानसिक बीमारी, यदि कोई हो) के साथ निकटता (समय सीमा के संदर्भ में) स्थापित करने में मदद करेगा और बचन सिंह [बचन सिंह बनाम पंजाब राज्य, (1980) 2 एस. सी. सी. 684 में वर्णित कारकों (1), (5), (6) और (7) को कम करने के लिए मार्गदर्शन प्रदान करेगाः1980 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 580] यहां तक कि (3) और (4) के अन्य कारकों के लिए भी-राज्य पर पूरी तरह से एक जिम्मेदारी-अपराध के होने के तुरंत बाद मनोचिकित्सा और मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन के इस रूप का संचालन करना, अपीलीय न्यायालयों को तुलना के लिए उपयोग करने के लिए एक आधार रेखा प्रदान करेगा, यानी सुधार की दिशा में अभियुक्त की प्रगति का मूल्यांकन करने के लिए, जो कारावास की अवधि के दौरान हासिल की गई थी।

250. इसके बाद, राज्य को समयबद्ध तरीके से अभियुक्त से संबंधित अतिरिक्त जानकारी एकत्र करनी चाहिए। एक सचित्र, लेकिन विस्तृत सूची इस प्रकार हैः

(ए) आयु

(बी) प्रारंभिक पारिवारिक पृष्ठभूमि (भाई-बहन, माता-पिता की सुरक्षा, हिंसा या उपेक्षा का कोई भी इतिहास)

(सी) वर्तमान पारिवारिक पृष्ठभूमि (परिवार के जीवित सदस्य, चाहे वे विवाहित हों, उनके बच्चे हों, आदि)।

(डी) शिक्षा का प्रकार और स्तर

(ई) सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि (गरीबी या अभाव की स्थिति, यदि कोई हो, सहित)

(एफ) आपराधिक पृष्ठभूमि (अपराध का विवरण और क्या दोषी ठहराया गया है, सजा सुनाई गई है, यदि कोई हो)

(जी) आय और रोजगार का प्रकार (चाहे कोई न हो, या अस्थायी या स्थायी, आदि);

(एच) अन्य कारक जैसे अस्थिर सामाजिक व्यवहार का इतिहास, या मानसिक या मनोवैज्ञानिक बीमारी (ओं), व्यक्ति का अलगाव (कारणों, यदि कोई हो), आदि।

यह जानकारी सजा सुनाने के चरण में अनिवार्य रूप से निचली अदालत को उपलब्ध होनी चाहिए। अभियुक्त को भी सभी कम प्रस्तुत वाली परिस्थितियों को स्थापित प्रस्तुत के लिए खंडन में सबूत पेश प्रस्तुत का समान अवसर दिया जाना चाहिए।

251. अंत में, अभियुक्त के जेल आचरण और व्यवहार, किए गए कार्य (यदि कोई हो), अभियुक्त द्वारा की गई गतिविधियों और अन्य संबंधित विवरणों के बारे में जानकारी संबंधित जेल अधिकारियों (यानी परिवीक्षा और कल्याण अधिकारी, जेल अधीक्षक, आदि) से एक रिपोर्ट के रूप में मांगी जानी चाहिए।). यदि निचली अदालत की दोषसिद्धि, या उच्च न्यायालय की पुष्टि,

जैसा भी मामला हो, के लंबे अंतराल के बाद अपील की सुनवाई की जाती है, तो अभियुक्त द्वारा की गई समकालीन प्रगति की अधिक सटीक और पूरी समझ के लिए जेल अधिकारियों से एक नई रिपोर्ट (पिछली अदालत द्वारा उपयोग की गई रिपोर्ट के बजाय) की सिफारिश की जाती है। जेल अधिकारियों को एक नई मनोरोग और मनोवैज्ञानिक रिपोर्ट भी शामिल करनी चाहिए जो सुधारात्मक प्रगति का सबूत देगी, और दोषसिद्धि के बाद की मानसिक बीमारी, यदि कोई हो, का खुलासा करेगी।

252. यह इंगित करना उचित है कि यह न्यायालय अनिल बनाम महाराष्ट्र राज्य [अनिल बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2014) 4 एस. सी. सी. 69: (2014) 2 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 266] ने वास्तव में आपराधिक अदालतों को अतिरिक्त सामग्री की मांग करने का निर्देश दिया हैः(एस. सी. सी. पृष्ठ. 86, पैरा 33)

"33. ...कई बार, सजा का निर्धारण करते समय, अदालतें किसी विशेष मामले के तथ्यों को देखते हुए इसे हल्के में लेती हैं कि आरोपी समाज के लिए खतरा होगा और सुधार और पुनर्वास की कोई संभावना नहीं है, जबकि उन कारकों का पता लगाना अदालत का कर्तव्य है, और राज्य आरोपी के सुधार और पुनर्वास की संभावना के पक्ष और विपक्ष में सामग्री प्रस्तुत करने के लिए बाध्य है। तथ्य, जिनसे अदालतें निपटती हैं, किसी मामले में, ऐसे निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए आधार नहीं हो सकते हैं, जिसके लिए, जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, अतिरिक्त सामग्री की आवश्यकता होती है। इसलिए हम निर्देश देते हैं कि दांडिक न्यायालय, दण्डसिद्धि के बाद, धारा 302 आई. पी. सी. जैसे अपराधों से निपटने के दौरान, उचित मामलों में, यह निर्धारित करने के लिए एक रिपोर्ट

बुला सकते हैं कि क्या अभियुक्त को सुधारा जा सकता है या उसका पुनर्वास किया जा सकता है, जो प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

(जोर दिया गया)

हम एतद्द्वारा पूरी तरह से समर्थन और निर्देश देते हैं कि इसे समान रूप से लागू किया जाना चाहिए, जैसा कि ऊपर विस्तार से बताया गया है, उन अपराधों की सजा के लिए जो मौत की सजा की संभावना रखते हैं।

38. हमारी विचार प्रक्रिया, श्री मृणाम सतीश द्वारा लिखित विवेक, भेदभाव और कानून का शासन, भारत में सजा सुधार'' नामक पुस्तक से प्रज्वलित हुई है, जिसे कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय प्रस द्वारा प्रकाशित किया गया है, (2017). विद्वान लेखक ने उजरायन में सजा नीति से व्यापक रूप से प्ररणा ली है। पुस्तक को ध्यान से पढ़ने पर यह सजा नीति के बारे में एक उत्कृष्ट अंतर्दृष्टि प्रस्तुत करती है। इजरायली मॉडल एक अभियुक्त को सजा सुनाते समय न्यायाधिश को दिशा-निर्देशों के रूप में संकलित कई कारकों को ध्यान में रखता है।

39. कनाडा, न्यूजीलैंड और ब्रिटेन जैसे अन्य देशों में अपनाई गई नीति पर गौर करने से भी हमें लाभ हुआ है।

**<u>कनाडा</u>**

**<u>आपराधिक संहिता (कनाडा)</u>**

**<u>सजा सुनाने का उद्देश्य और सिद्धांत</u>**

**<u>आपराधिक संहिता (कनाडा) की धारा 718</u>**

**"उद्देश्य**

**718. <u>सजा सुनाने का मूल उद्देश्य समाज की रक्षा करना और अपराध रोकथाम की पहलों के साथ-साथ कानून का सम्मान करना और निम्नलिखित में से एक या अधिक उद्देश्यों वाले प्रतिबंधों को लागू करके एक न्यायपूर्ण, शांतिपूर्ण और सुरक्षित समाज के रखरखाव में योगदान करना है:</u>**

**(ए)** गैरकानूनी आचरण और पीड़ितों या समुदाय को हुए नुकसान की निंदा करना जो गैरकानूनी आचरण के कारण होता है;

**(बी)** अपराधी और अन्य व्यक्तियों को अपराध करने से रोकना;

**(सी)** जहां आवश्यक हो, अपराधियों को समाज से अलग करना;

**(डी)** अपराधियों के पुनर्वास में सहायता करना;

**(ई)** पीड़ितों या समुदाय को किए गए नुकसान के लिए क्षतिपूर्ति प्रदान करना; और

**(एफ)** अपराधियों में जिम्मेदारी की भावना को बढ़ावा देना और पीड़ितों या समुदाय को हुए नुकसान को स्वीकार करना।"

(जोर दिया गया)

**<u>आपराधिक संहिता (कनाडा) की धारा 718.1</u>**

**"मौलिक सिद्धांत**

**718.1** सजा **अपराध की गंभीरता** और **अपराधी की जिम्मेदारी के अनुपात में होनी चाहिए।"**

(जोर दिया गया)

**<u>आपराधिक संहिता (कनाडा) की धारा 718.2</u>**

**"सजा सुनाने के अन्य सिद्धांत**

**718.2** सजा देने वाला **<u>न्यायालय निम्नलिखित सिद्धांतों पर भी विचार करेगाः</u>**

**(ए)** अपराध या अपराधी से संबंधित **किसी भी प्रासांगिक उत्तेजना या कमजोर परिस्थिति के लिए एक सजा को बढ़ाया या कम किया जाना चाहिए, और पूर्वगामी की व्यापकता को सीमित किए बिना। अपराध या अपराधी से संबंधित परिस्थितियों को बढ़ाना या कम करना, और पूर्वगामी की व्यापकता को सीमित किए बिना,**

**(i)** यह साक्ष्य कि अपराध जाति, राष्ट्रीय या जातीय मूल, भाषा, रंग, धर्म, लिंग, आयु, मानसिक या शारीरिक अक्षमता, यौन अभिविन्यास, या लिंग पहचान या अभिव्यक्ति के आधार पर पूर्वाग्रह, पूर्वाग्रह या घृणा से प्रेरित था, या किसी अन्य समान कारक पर,

**(ii)** इस बात का प्रमाण कि अपराध करने में अपराधी ने अपराधी के अंतरंग साथी या पीड़ित के सदस्य या अपराधी के परिवार के साथ दुर्व्यवहार किया है।

**(ii.1)** इस बात का प्रमाण कि अपराधी ने अपराध करने में अठारह वर्ष से कम आयु के व्यक्ति के साथ दुर्व्यवहार किया है।

**(iii)** इस बात का प्रमाण कि अपराध करने में अपराधी ने पीड़ित के संबंध में विश्वास या अधिकार की स्थिति का दुरुपयोग किया है।

**(iii.1)** सबूत है कि अपराध का पीड़ित पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा, उनकी उम्र और उनकी स्वास्थ्य और वित्तीय स्थिति सहित अन्य व्यक्तिगत परिस्थितियों को देखते हुए,

**(iii.2)** सबूत है कि अपराध एक ऐसे व्यक्ति के खिलाफ किया गया था, जो अपने कर्तव्यों और कार्यों के प्रदर्शन में, व्यक्तिगत देखभाल सेवाओं सहित स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान कर रहा था,

**(iv)** इस बात का प्रमाण कि अपराध किसी आपराधिक संगठन के निर्देश पर या उसके सहयोग से किया गया था, (v) इस बात का प्रमाण कि अपराध एक आतंकवादी अपराध था,

**(vi)** सबूत है कि अपराध तब किया गया था जब अपराधी धारा 742.1 के तहत किए गए सशर्त सजा आदेश के अधीन था या पैरोल, वैधानिक रिहाई या अस्थायी रूप से रिहा किया गया था। सुधार और सशर्त रिहाई अधिनियम के तहत अनुपस्थिति, और

**(vii)** इस बात का प्रमाण कि अपराध करने का प्रभाव किसी अन्य व्यक्ति को व्यक्तिगत देखभाल सेवाओं सहित स्वास्थ्य सेवाएं प्राप्त करने में बाधा डालने का था,

**परेशान करने वाली परिस्थितियाँ मानी जाएंगी;**

**(बी) सजा समान परिस्थितियों में किए गए समान अपराधों के लिए समान अपराधियों पर लगाई गई सजा के समान होनी चाहिए;**

**(सी) जहां लगातार सजा दी जाती है, संयुक्त सजा अनुचित रूप से लंबी या कठोर नहीं होनी चाहिए।**

**(डी) यदि परिस्थितियों में कम प्रतिबंधात्मक प्रतिबंध उचित हो सकते हैं तो अपराधी को स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जाना चाहिए; और**

(ई) कारावास के अलावा सभी उपलब्ध प्रतिबंध, जो परिस्थितियों में उचित हैं और पीड़ितों या समुदाय को किए गए नुकसान के अनुरूप हैं, सभी अपराधियों के लिए विचार किया जाना चाहिए, जिसमें आदिवासी अपराधियों की परिस्थितियों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

(जोर दिया गया)

**प्रक्रिया और साक्ष्य**

**आपराधिक संहिता (कनाडा) की धारा 720**

**"सजा सुनाने की कार्यवाही**

**720 (1) एक अदालत, एक अपराधी को दोषी पाए जाने के बाद जितनी जल्दी हो सके, उचित सजा निर्धारित करने के लिए कार्यवाही का संचालन करेगी।**

**न्यायालय-पर्यवेक्षित कार्यक्रम**

(2) अदालत, महान्यायवादी और अपराधी की सहमति से और न्याय और अपराध के किसी भी पीड़ित के हितों पर विचार करने के बाद, सजा सुनाने में देरी कर सकती है ताकि अपराधी अदालत की देखरेख में प्रांत द्वारा अनुमोदित उपचार कार्यक्रम में भाग ले सके, जैसे कि एक लत उपचार कार्यक्रम या घरेलू हिंसा परामर्श कार्यक्रम।

(जोर दिया गया)

**आपराधिक संहिता (कनाडा) की धारा 721**

**"परिवीक्षा अधिकारी द्वारा रिपोर्ट**

**721 (1) उप-धारा (2) के तहत बनाए गए विनियमों के अधीन रहते हुए, जहां एक संगठन के अलावा कोई अन्य अभियुक्त किसी अपराध के लिए दोषी स्वीकार करता है या दोषी पाया जाता है, एक परिवीक्षा अधिकारी, यदि किसी अदालत द्वारा ऐसा करने की आवश्यकता होती है, तो सजा देने में अदालत की सहायता करने या यह निर्धारित करने के उद्देश्य से कि क्या आरोपी को धारा 730 के तहत आरोपमुक्त किया जाना चाहिए, अभियुक्त से संबंधित एक लिखित रिपोर्ट तैयार करेगा और अदालत में दाखिल करेगा।**

(जोर दिया गया)

**न्यू ज़ीलैंड**

**सजा अधिनियम 2002, न्यूजीलैंड**

**सजा अधिनियम, 2002 की धारा 3**

"भाग 1 सजा के उद्देश्य और सिद्धांत, और सामान्य अनुप्रयोग के प्रावधान

प्रारंभिक प्रावधान

**3 उद्देश्य**

इस अधिनियम के उद्देश्य हैं -

**(ए)** उन उद्देश्यों को निर्धारित करना जिनके लिए अपराधियों को सजा दी जा सकती है या अन्यथा निपटा जा सकता है; और

**(बी) उन उद्देश्यों को बढ़ावा देना, और सजा देने की प्रथाओं के बारे में जनता की समझ में सहायता करना, अदालतों द्वारा सजा देने या अन्यथा अपराधियों से निपटने में लागू किए जाने वाले सिद्धांतों और दिशानिर्देशों को प्रदान करना; और**

**(सी)** अपराधियों से निपटने के लिए पर्याप्त सजा और अन्य साधन प्रदान करना; और

**(डी)** अपराध के पीड़ितों के हितों का प्रावधान करना।

(जोर दिया गया)

**सजा अधिनियम, 2002 की धारा 7**

***"सजा सुनाने के उद्देश्य और सिद्धांत***

**7 सजा सुनाने या अन्यथा अपराधियों से निपटने के उद्देश्य**

(1) जिन उद्देश्यों के लिए अदालत किसी अपराधी को सजा दे सकती है या अन्यथा उससे निपट सकती है, वे हैं -

**(ए) अपराध द्वारा पीड़ित और समुदाय को हुए नुकसान के लिए अपराधी को जवाबदेह ठहराना; या**

**(बी) अपराधी में उस नुकसान के लिए जिम्मेदारी की भावना को बढ़ावा देना और उसे स्वीकार करना; या**

**(सी) अपराध के पीड़ित के हितों का प्रावधान करना; या**

**(डी) उल्लंघनकर्ता द्वारा किए गए नुकसान के लिए क्षतिपूर्ति प्रदान करना; या**

**(ई) उस आचरण की निंदा करना जिसमें अपराधी शामिल था; या**

**(एफ) अपराधी या अन्य व्यक्तियों को समान या इसी तरह का अपराध करने से रोकना; या**

**(जी) समुदाय को अपराधी से बचाने के लिए; या**

**(एच) अपराधी के पुनर्वास और पुनर्एकीकरण में सहायता करना; या**

**(i) <u>पैराग्राफ (ए) से (एच) में 2 या अधिक उद्देश्यों का संयोजन।</u>**

(2) संदेह से बचने के लिए, इस धारा में जिस क्रम में उद्देश्य दिखाई देते हैं, उसके बारे में कुछ भी नहीं दर्शाता है कि निर्दिष्ट किसी भी उद्देश्य को निर्दिष्ट किसी भी अन्य उद्देश्य की तुलना में अधिक महत्व दिया जाना चाहिए।.

(जोर दिया गया)

**<u>सजा अधिनियम, 2002 की धारा 8</u>**

**<u>“8 सजा सुनाने या अन्यथा अपराधियों से निपटने के सिद्धांत</u>**

सजा सुनाने या किसी अपराधी के साथ अन्यथा व्यवहार करने में न्यायालय -

**(ए) <u>विशेष मामले में अपराध की गंभीरता को ध्यान में रखना चाहिए, जिसमें अपराधी की दोषपूर्णता की डिग्री भी शामिल है; और</u>**

**(बी)** अन्य प्रकार के अपराधों की तुलना में अपराध के प्रकार की गंभीरता को ध्यान में रखना चाहिए, जैसा कि अपराधों के लिए निर्धारित अधिकतम दंड द्वारा इंगित किया गया है; और

**(सी)** अपराध के लिए निर्धारित अधिकतम दंड अधिरोपित करना चाहिए यदि उल्लंघन उन सबसे गंभीर मामलों के भीतर है जिनके लिए वह दंड निर्धारित किया गया है, जब तक कि अपराधी से संबंधित परिस्थितियां इसे अनुचित नहीं बनाती हैं; और

**(डी)** अपराध के लिए निर्धारित अधिकतम के करीब जुर्माना लगाना चाहिए यदि उल्लंघन उन सबसे गंभीर मामलों के करीब है जिनके लिए वह जुर्माना निर्धारित

किया गया है, जब तक कि अपराधी से संबंधित परिस्थितियां इसे अनुचित नहीं बनाती हैं; और

**(ई) <u>समान परिस्थितियों में समान अपराध करने वाले समान अपराधियों के संबंध में उचित सजा के स्तर और अपराधियों से निपटने के अन्य साधनों के साथ निरंतरता की सामान्य वांछनीयता को ध्यान में रखना चाहिए; और</u>**

**(एफ) <u>पीड़ित पर अपराध के प्रभाव के संबंध में अदालत को प्रदान की गई किसी भी जानकारी को ध्यान में रखना चाहिए; और</u>**

**(जी)** धारा 10 ए में निर्धारित वाक्यों और आदेशों के पदानुक्रम के अनुसार, परिस्थितियों में उपयुक्त न्यूनतम प्रतिबंधात्मक परिणाम लागू करना चाहिए; और

**(एच) <u>अपराधी की किसी विशेष परिस्थिति को ध्यान में रखना चाहिए जिसका अर्थ है कि अपराधी के साथ व्यवहार करने का कोई सजा या अन्य साधन जो अन्यथा उचित होगा, विशेष मामले में, असमान रूप से गंभीर होगा; और</u>**

**(आई) <u>आंशिक रूप से या पूरी तरह से पुनर्वास उद्देश्य के साथ अपराधी के साथ व्यवहार करने के लिए सजा या अन्य साधन लागू करने में अपराधी की व्यक्तिगत, परिवार, समुदाय और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखना चाहिए; और</u>**

**(जे) <u>पुनर्स्थापनात्मक न्याय के किसी भी परिणाम को ध्यान में रखना चाहिए।</u>** विशेष मामले के संबंध में (धारा 10 में निर्दिष्ट किसी भी चीज़ सहित, बिना किसी सीमा के) जो प्रक्रियाएं हुई हैं, या अदालत को संतुष्ट किया गया है, उनके होने की संभावना है।

(जोर दिया गया)

**<u>सजा अधिनियम, 2002 की धारा 9</u>**

**<u>"9 बढ़ाने और कम करने वाले कारक</u>**

(1) सजा सुनाने या किसी अपराधी के साथ अन्यथा व्यवहार करने में अदालत को निम्नलिखित उत्तेजक कारकों को इस हद तक ध्यान में रखना चाहिए कि वे मामले में लागू होते हैंः

xxx xxx xxx

(2) सजा सुनाने या किसी अपराधी के साथ अन्यथा व्यवहार करने में अदालत को निम्नलिखित कम करने वाले कारकों को इस हद तक ध्यान में रखना चाहिए कि वे मामले में लागू होते हैंः

xxx xxx xxx

(3) उप-धारा (2) (ई) के बावजूद, अदालत को इस तथ्य को कम करने के रूप में ध्यान में नहीं रखना चाहिए कि अपराधी, अपराध करने के समय, शराब या किसी दवा या अन्य पदार्थ (प्रामाणिक चिकित्सा उद्देश्यों के लिए उपयोग की जाने वाली दवा या अन्य पदार्थ के अलावा) के स्वैच्छिक सेवन या उपयोग से प्रभावित था।

xxx xxx xxx

(4) उप-धारा (1) या उप-धारा (2) में कुछ भी नहीं -

(ए) न्यायालय को किसी अन्य उत्तेजक या शमनकारी कारक को ध्यान में रखने से रोकता है जिसे न्यायालय उचित समझता है; या

(बी) का तात्पर्य है कि उन उपखंडों में निर्दिष्ट एक कारक को किसी भी अन्य कारक की तुलना में अधिक महत्व दिया जाना चाहिए जिसे न्यायालय ध्यान में रख सकता है।

**सजा अधिनियम, 2002 की धारा 9ए**

**"914 साल से कम उम्र के बच्चे के खिलाफ हिंसा या उपेक्षा से जुड़े मामले।**

**(1) यह धारा तब लागू होती है जब अदालत 14 वर्ष से कम आयु के बच्चे के खिलाफ हिंसा या उपेक्षा से जुड़े मामले में किसी अपराधी को सजा सुना रही है या अन्यथा उससे निपट रही है।**

(2) **न्यायालय को निम्नलिखित उत्तेजक कारकों को इस हद तक ध्यान में रखना चाहिए कि वे मामले में लागू होते हैं:**

(ए) पीड़ित की रक्षाहीनता:

(बी) अपराध के परिणामस्वरूप होने वाले किसी भी नुकसान के संबंध में, पीड़ित पर कोई गंभीर या दीर्घकालिक शारीरिक या मनोवैज्ञानिक प्रभाव:

(सी) पीड़ित और अपराधी के बीच विश्वास के किसी भी संबंध के उल्लंघन की परिमाण:

(डी) पीड़ित को अपराध की सूचना देने से रोकने के लिए अपराधी द्वारा धमकी:

(ई) अधिकारियों से जानबूझकर अपराध को छिपाना।

**(3) उप-धारा (2) के कारक उन सभी कारकों के अतिरिक्त हैं जिन्हें न्यायालय धारा 9 के तहत ध्यान में रख सकता है।**

(4) इस धारा की किसी भी बात का तात्पर्य यह नहीं है कि उप-धारा (2) में निर्दिष्ट किसी कारक को किसी अन्य कारक की तुलना में अधिक महत्व दिया जाना चाहिए जिसे न्यायालय ध्यान में रख सकता है।

(जोर दिया गया)

**सजा अधिनियम, 2002 की धारा 24**

**"24 तथ्यों का प्रमाण**

(1) **एक सजा या मामले के अन्य निपटान का निर्धारण करने में, एक अदालत-**

**(ए) मुकदमे में साक्ष्य द्वारा प्रकट किए गए किसी भी तथ्य और अभियोजक और अपराधी द्वारा सहमत किसी भी तथ्य को साबित के रूप में स्वीकार कर सकता है; और**

**(बी)** उन सभी तथ्यों को, जो व्यक्त या निहित हैं, साबित के रूप में स्वीकार करना चाहिए, जो दोषी होने की याचिका या अपराध के निष्कर्ष के लिए आवश्यक हैं।

(2) **यदि कोई तथ्य जो किसी सजा या मामले के अन्य निपटारे के निर्धारण के लिए प्रासंगिक है, एक पक्ष द्वारा प्रतिपादित किया जाता है और दूसरे द्वारा विवादित किया जाता है,-**

**(ए) न्यायालय को पक्षकारों को इस बात के महत्व का संकेत देना चाहिए कि यदि विवादित तथ्य मौजूद पाया जाता है तो उसके उससे जुड़ने की संभावना होगी, और सजा या मामले के अन्य निपटान के लिए इसका महत्वः**

**(बी) यदि कोई पक्ष चाहता है कि अदालत उस तथ्य पर भरोसा करे, तो पक्षकार इसके अस्तित्व के बारे में सबूत पेश कर सकते हैं जब तक कि अदालत का समाधान नहीं हो जाता है कि मुकदमे में पर्याप्त सबूत पेश किए गए थेः**

**(सी) अभियोजक को किसी भी विवादित उत्तेजक तथ्य के अस्तित्व को एक उचित संदेह से परे साबित करना चाहिए, और बचाव पक्ष द्वारा उठाए गए किसी भी विवादित शमनकारी तथ्य (पैराग्राफ (डी) में संदर्भित एक शमनकारी तथ्य के अलावा) को एक उचित संदेह से परे नकारना चाहिए जो पूरी तरह से अविश्वसनीय या स्पष्ट रूप से गलत नहीं हैः**

**(डी) अपराधी को संभावनाओं के संतुलन पर किसी भी विवादित शमनकारी तथ्य के अस्तित्व को साबित करना चाहिए जो अपराध की प्रकृति या अपराध में अपराधी के हिस्से से संबंधित नहीं हैः**

**(ई)** कोई भी पक्ष दूसरे पक्ष द्वारा बुलाए गए किसी भी गवाह से जिरह कर सकता है।

(3) **इस धारा के प्रयोजनों के लिए-61 उत्तेजक तथ्य का अर्थ है कोई भी तथ्य जो-**

**(ए) अभियोजक एक ऐसे तथ्य के रूप में दावा करता है जो अपराध के लिए अन्यथा उपयुक्त होने की तुलना में अधिक दंड या अन्य परिणाम को उचित ठहराता है; और**

**(बी) न्यायालय स्वीकार करता है कि एक तथ्य है जो, यदि स्थापित हो जाता है, तो सजा या मामले के अन्य स्वभाव पर प्रभाव डाल सकता है।**

**तथ्य को कम करने का अर्थ है कोई भी तथ्य जो-**

**(ए) अपराधी एक ऐसे तथ्य के रूप में दावा करता है जो अपराध के लिए अन्यथा उपयुक्त होने की तुलना में कम दंड या अन्य परिणाम को उचित ठहराता है; और**

**(बी) न्यायालय स्वीकार करता है कि यह एक ऐसा तथ्य है जो यदि स्थापित हो जाता है, तो सजा या मामले के अन्य निपटान पर इसका प्रभाव पड़ सकता है।**

(जोर दिया गया)

**सजा अधिनियम, 2002 की धारा 25**

**"25 उपयुक्त सजा के बारे में पूछताछ के लिए स्थगन की शक्ति**

**(1) एक अदालत अपराधी को दोषी पाए जाने या दोषी ठहराए जाने के बाद और अपराधी को सजा दिए जाने या अन्यथा निपटाए जाने से पहले किसी भी अपराध के संबंध में कार्यवाही को स्थगित कर सकती है।**

**(ए) पूछताछ करने में सक्षम बनाना या मामले से निपटने का सबसे उपयुक्त तरीका निर्धारित करनाः**

**(बी) पुनर्स्थापनात्मक न्याय प्रक्रिया को पूरा करने में सक्षम बनानाः**

**(सी)** पुनर्स्थापनात्मक न्याय समझौते को पूरा करने में सक्षम बनानाः

**(डी)** पुनर्वास कार्यक्रम या कार्रवाई के **क्रम को सक्षम बनाने के लिए किया गयाः**

**(डीए)** यह निर्धारित करने के लिए कि क्या किसी लिखत को ज़ब्त करने का आदेश लागू करना है और, यदि ऐसा है, तो उस आदेश की शर्तें -

**(ई)** पैराग्राफ (बी), (सी), या (डी) में निर्दिष्ट किसी भी प्रक्रिया, समझौते, कार्यक्रम या कार्रवाई के पाठ्यक्रम के लिए अदालत को अपराधी की प्रतिक्रिया को ध्यान में रखने में सक्षम बनाना।

(2) **यदि इस धारा के तहत या धारा के तहत कार्यवाही स्थगित कर दी जाती है** 10(4) या 24E, एक न्यायाधीश या न्यायाधीश या सामुदायिक दंडाधिकारी जिसे एक ही प्रकार के अपराधों से निपटने की अधिकारिता है (चाहे वह वही न्यायाधीश हो या न्यायाधीश या सामुदायिक दंडाधिकारी जिसके समक्ष मामला हो) **सुनवाई की गई] मामले की परिस्थितियों की जांच के बाद, सजा या अन्यथा अपराधी के साथ उस अपराध के लिए व्यवहार कर सकता है जिससे स्थगन संबंधित है।"**

(जोर दिया गया)

**सजा अधिनियम, 2002 की धारा 26**

**"26 पूर्व-सजा रिपोर्ट/प्रतिवेदन**

**(1)** धारा 26ए **में दिए गए प्रावधान के अलावा, यदि कोई अपराधी जिस पर कारावास द्वारा दंडनीय अपराध का आरोप लगाया जाता है, दोषी पाया जाता है या दोषी ठहराया जाता है, तो अदालत एक परिवीक्षा अधिकारी को उप-धारा (2) के अनुसार अदालत के लिए एक रिपोर्ट तैयार करने का निर्देश दे सकती है।**

(2) एक पूर्व-सजा रिपोर्ट में शामिल हो सकता है-

(ए) अपराधी की व्यक्तिगत, परिवार, समुदाय और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि और सामाजिक परिस्थितियों के बारे में जानकारीः

(बी) अपराध में योगदान देने वाले कारकों और अपराधी की पुनर्वास आवश्यकताओं के बारे में जानकारीः

(सी) धारा 10 (1) में निर्दिष्ट किसी प्रस्ताव, समझौते, प्रतिक्रिया या किसी प्रकार के उपाय या मामले के संबंध में हुई किसी अन्य पुनर्स्थापनात्मक न्याय प्रक्रियाओं के परिणाम के बारे में जानकारीः

**(डी) अपराधी द्वारा आगे अपराध करने के जोखिम को ध्यान में रखते हुए उचित सजा या मामले के अन्य निपटान पर सिफारिशें।**

**(ई) पर्यवेक्षण, गहन पर्यवेक्षण या गृह निरोध की प्रस्तावित सजा के मामले में, उस सजा की उचित शर्तों पर अनुशंसाएँः**

**(एफ) पर्यवेक्षण, गहन पर्यवेक्षण या एक या अधिक कार्यक्रमों से जुड़े गृह निरोध की प्रस्तावित सजा के मामले में, -**

(i) कार्यक्रम या कार्यक्रमों पर एक रिपोर्ट, जिसमें उन शर्तों का सामान्य विवरण शामिल है जिनका अपराधी को पालन करना होगा; और

**(ii)** इस बात की पुष्टि करना कि रिपोर्ट अपराधी को उपलब्ध कराई गई हैः

(जी) पर्यवेक्षण, गहन पर्यवेक्षण, या घर में निरोध की प्रस्तावित सजा के मामले में जिसमें एक विशेष स्थिति शामिल है जिसमें अपराधी को पर्ची दवा लेने की आवश्यकता होती है, पुष्टि करें कि अपराधी

**(i)** एक ऐसे व्यक्ति द्वारा पूरी तरह से सलाह दी गई है जो दवा की प्रकृति और दवा के संभावित या इच्छित प्रभाव और किसी भी ज्ञात जोखिम के बारे में उस दवा को लिखने के लिए योग्य है; और

**(ii)** पर्ची दवा लेने के लिए सहमतिः

**(एच)** सामुदायिक कार्य की प्रस्तावित सजा के मामले में-

(i) उस क्षेत्र में, जिसमें अपराधी रहेगा, धारा 63 में निर्दिष्ट प्रकार के सामुदायिक कार्य की उपलब्धता के बारे में जानकारी; और

(ii) इस बारे में सिफारिशें कि क्या अदालत को धारा 66ए के तहत बुनियादी काम और जीवन कौशल में प्रशिक्षण लेने के लिए काम के घंटों को खर्च करने के लिए अधिकृत करना चाहिएः

**(आई)** गहन पर्यवेक्षण की प्रस्तावित सजा या 24 महीने या उससे कम के लिए प्रस्तावित कारावास की सजा के लिए संभावित रिहाई की शर्तों के मामले में, सुधार विभाग के मुख्य कार्यकारी की राय है कि क्या -

(i) एक ऐसी शर्त जो अपराधी को निर्दिष्ट समय पर या हर समय निर्दिष्ट स्थानों या क्षेत्रों में प्रवेश करने या रहने से रोकती है (इस पैराग्राफ में **एक ठिकाने की शर्त**) सजा या रिहाई की शर्तों के अधीन रहते हुए अपराधी के फिर से अपराध करने के जोखिम को कम करने के उद्देश्य को सुविधाजनक या बढ़ावा देगी; और

(ii) एक ठिकाने की स्थिति अपराधी के पुनर्वास और पुनर्एकीकरण के उद्देश्य को सुविधाजनक या बढ़ावा देगी; और

(iii) एक और शर्त जिसमें अपराधी को एक ठिकाने की स्थिति के साथ अपने अनुपालन की इलेक्ट्रॉनिक निगरानी के लिए प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है, जो कि ठिकाने की स्थिति का पालन न करने की संभावना को ध्यान में रखते हुए आवश्यक है।

(3) अदालत को किसी अपराधी की व्यक्तिगत विशेषताओं या व्यक्तिगत इतिहास के किसी भी पहलू पर उप-धारा (1) के तहत रिपोर्ट तैयार करने का निर्देश नहीं देना चाहिए, यदि उन पहलुओं को शामिल करने वाली रिपोर्ट अदालत को आसानी से उपलब्ध है और यह मानने का कोई कारण नहीं है कि रिपोर्ट तैयार होने के बाद से अदालत के महत्व में कोई बदलाव हुआ है।

(4) **उप-धारा (1) के तहत एक रिपोर्ट तैयार करने का निर्देश देने पर, अदालत परिवीक्षा अधिकारी को उस प्रकार की सजा या स्वभाव के अन्य तरीके का संकेत दे सकती है जिस पर अदालत विचार कर रही है, और परिवीक्षा अधिकारी को कोई अन्य मार्गदर्शन भी दे सकती है जो रिपोर्ट तैयार करने में अधिकारी की सहायता करेगा।**

**(5) यदि किसी न्यायालय ने उप-धारा (1) के तहत एक रिपोर्ट तैयार करने का निर्देश दिया है, तो रिपोर्ट तैयार करने के लिए आरोपित परिवीक्षा अधिकारी अदालत से आगे के निर्देश मांग सकता है -**

**(ए)** न्यायालय द्वारा माँगी गई कोई विशेष सूचना; या

**(बी) कोई वैकल्पिक सजा या स्वभाव का अन्य तरीका जिस पर अदालत द्वारा विचार किया जा सकता है यदि यह प्रतीत होता है कि विचाराधीन सजा या स्वभाव का अन्य तरीका अनुचित है।**

(जोर दिया गया)

**सजा अधिनियम, 2002 की धारा 31**

**"31 कारण देने की सामान्य आवश्यकता**

(1) **अदालत को खुली अदालत में कारण देने चाहिए-**

**(ए) सजा के अधिरोपण के लिए या अपराधी से निपटने के किसी अन्य साधन के लिए; और**

**(बी)** भाग 2 **के तहत आदेश देने के लिए।**

**(2) इस धारा के तहत कारण दिए जा सकते हैं कि विशेष मामले के लिए जो भी स्तर की विशिष्टता उपयुक्त हो।**

(3) इस धारा में कुछ भी इस या किसी अन्य अधिनियम के किसी अन्य प्रावधान को सीमित नहीं करता है जिसके लिए अदालत को कारण देने की आवश्यकता होती है।

(4) **यह तथ्य कि कोई न्यायालय किसी विशेष मामले में कारण देते समय धारा 8 में किसी विशेष सिद्धांत या** धारा 9 **में किसी विशेष कारक का उल्लेख नहीं करता है या** धारा 10 **या** धारा 11 **के तहत विचार नहीं करता है, अपने आप में उस मामले में लगाए गए दंड या आदेश के खिलाफ अपील के लिए आधार नहीं है।**

(जोर दिया गया)

**संयुक्त राज्य**

**मृत्यु समीक्षक और न्याय अधिनियम, 2009 (यू. के.)**

**भाग 4**

**सजा**

**अध्याय 1**

*इंग्लैंड और वेल्स के लिए सजा परिषद*

**मृत्यु समीक्षक और न्याय अधिनियम, 2009 की धारा 118**

"118 इंग्लैंड और वेल्स के लिए सजा परिषद

(1) इंग्लैंड और वेल्स के लिए एक सजा परिषद होनी है।

(2) अनुसूची 15 परिषद के बारे में प्रावधान करती है।"

अनुसूची 15

इंग्लैंड और वेल्स के लिए सजा परिषद्

*परिषद का गठन*

**मृत्यु समीक्षक और न्याय अधिनियम, 2009 की अनुसूची 15, पैरा 1**

"1 परिषद में

(ए) लॉर्ड चांसलर ("न्यायिक सदस्य") की सहमति से लॉर्ड चीफ जस्टिस द्वारा नियुक्त 8 सदस्य शामिल होंगे।

(बी) लॉर्ड चीफ जस्टिस (गैर-न्यायिक सदस्य) की सहमति से लॉर्ड चांसलर द्वारा नियुक्त 6 सदस्य।

*परिषद आदि की अध्यक्षता के लिए किसी व्यक्ति की नियुक्ति*

**मृत्यु समीक्षक और न्याय अधिनियम, 2009 की अनुसूची 15, पैरा 2**

"2 लॉर्ड चीफ जस्टिस को लॉर्ड चांसलर की सहमति से नियुक्त करना चाहिए-

(ए) परिषद की अध्यक्षता करने वाला न्यायिक सदस्य ("अध्यक्ष सदस्य"), और

(बी) अध्यक्षीय सदस्य की अनुपस्थिति में परिषद की अध्यक्षता करने के लिए एक अन्य न्यायिक सदस्य।

*न्यायिक सदस्यों की नियुक्ति*

**मृत्यु समीक्षक और न्याय अधिनियम, 2009 की अनुसूची 15, पैरा 3**

"3(1) एक व्यक्ति न्यायिक सदस्य के रूप में नियुक्ति के लिए पात्र है यदि वह व्यक्ति-

(ए) अपील न्यायालय का एक न्यायाधीश,

(बी) उच्च न्यायालय का एक कनिष्ठ न्यायाधीश,

(सी) एक सर्किट न्यायाधीश,

(डी) जिला न्यायाधीश (मजिस्ट्रेट न्यायालय), या

(ई) एक सामान्य न्याय।

(2) न्यायिक सदस्यों में कम से कम एक सर्किट न्यायाधीश, एक जिला न्यायाधीश (मजिस्ट्रेट की अदालतें) और एक सामान्य न्यायाधीश शामिल होना चाहिए।

(3) न्यायिक सदस्यों की नियुक्ति करते समय, लॉर्ड मख्य न्यायाधिश को न्यायिक सदस्यों की वांछनीयता को ध्यान में रखना चाहिए, जिसमें कम से कम एक व्यक्ति शामिल है जो लॉर्ड चीफ जस्टिस को इंग्लैंड और वेल्स में आपराधिक अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने वाले न्यायिक पदधारकों के प्रशिक्षण से संबंधित जिम्मेदारियों के लिए दिखाई देता है।

(4) "न्यायिक पद-धारक का अर्थ संवैधानिक सुधार अधिनियम 2005 (सी. 4) की धारा 109 (4) द्वारा दिया गया है।.

*गैर-न्यायिक सदस्यों की नियुक्ति*

**<u>मृत्यु समीक्षक और न्याय अधिनियम, 2009 की अनुसूची 15, पैरा 4</u>**

"4(1) एक व्यक्ति गैर-न्यायिक सदस्य के रूप में नियुक्ति के लिए पात्र है यदि वह व्यक्ति लॉर्ड चांसलर को निम्नलिखित में से एक या अधिक क्षेत्रों में अनुभव रखने के लिए प्रकट होता है -

(ए) आपराधिक बचाव;

(बी) आपराधिक अभियोजन;

(सी) पुलिस;

(डी) सजा देने की नीति और न्याय का प्रशासन;

(ई) अपराध के पीड़ितों के कल्याण को बढ़ावा देना;

(एफ) आपराधिक कानून या अपराध विज्ञान से संबंधित शैक्षणिक अध्ययन या अनुसंधान;

(जी) सांख्यिकी का उपयोग;

(एच) अपराधियों का पुनर्वास।

(2) आपराधिक अभियोजन के अनुभव के आधार पर गैर-न्यायिक सदस्य के रूप में नियुक्ति के लिए पात्र व्यक्तियों में लोक अभियोजन निदेशक शामिल हैं।.

**मृत्यु समीक्षक और न्याय अधिनियम, 2009 दिशानिर्देशों की धारा 120**

*दिशानिर्देश*

**“120 सजा सुनाने के दिशानिर्देश**

(1) इस अध्याय में "सजा देने के दिशानिर्देश" का अर्थ है अपराधियों को सजा देने से संबंधित दिशानिर्देश।

(2) सजा देने का दिशानिर्देश सामान्य प्रकृति का हो सकता है या किसी विशेष अपराध, अपराध की विशेष श्रेणी या अपराधी की विशेष श्रेणी तक सीमित हो सकता है।

(3) परिषद को तैयार करना चाहिए-

(ए) सजा संहिता की धारा 73 (दोषी दलीलों के लिए सजा में कमी) के तहत अदालत के कर्तव्य के निर्वहन के बारे में सजा देने के दिशानिर्देश, और

(बी) सजा की समग्रता के बारे में कानून के किसी भी नियम के लागू होने के बारे में सजा देने के दिशानिर्देश।

(4) परिषद किसी भी अन्य मामले के बारे में सजा देने के दिशा-निर्देश तैयार कर सकती है।

(5) जहां परिषद ने उप-धारा (3) या (4) के तहत दिशानिर्देश तैयार किए हैं, उन्हें दिशानिर्देशों के मसौदे के रूप में प्रकाशित करना चाहिए।

(6) परिषद को दिशानिर्देशों के मसौदे के बारे में निम्नलिखित व्यक्तियों से परामर्श करना चाहिए -

(ए) प्रभु कुलाधिपति;

(बी) ऐसे व्यक्ति जिन्हें कुलाधिपति निर्देशित कर सकते हैं;

(सी) हाउस ऑफ कॉमन्स की न्याय चयन समिति (या, यदि उस नाम की कोई समिति नहीं रहती है, तो हाउस ऑफ कॉमन्स की ऐसी समिति जिसे लॉर्ड चांसलर निर्देशित करता है);

(डी) ऐसे अन्य व्यक्ति जिन्हें परिषद उचित समझती है।

(7) उप-धारा (3) के भीतर दिशानिर्देशों के मामले में, परिषद को दिशानिर्देशों में कोई भी संशोधन करने के बाद, जिन्हें वह उचित समझती है, उन्हें निश्चित दिशानिर्देशों के रूप में जारी करना चाहिए।

(8) किसी भी अन्य मामले में, परिषद, ऐसे संशोधन करने के बाद, उन्हें निश्चित दिशानिर्देशों के रूप में जारी कर सकती है।

(9) परिषद समय-समय पर इस धारा के तहत जारी सजा के दिशा-निर्देशों की समीक्षा कर सकती है और उन्हें संशोधित कर सकती है।

(10) उपखंड (5), (6) और (8) दिशानिर्देशों के संशोधन पर लागू होते हैं क्योंकि वे उनकी तैयारी पर लागू होते हैं (और उप-धारा (8) लागू होती है, भले ही संशोधित किए जा रहे दिशानिर्देश उप-धारा (3) के भीतर हों।

(11) इस धारा के तहत कार्यों का प्रयोग करते समय, परिषद को निम्नलिखित मामलों पर ध्यान देना चाहिए -

(क) अपराधों के लिए इंग्लैंड और वेल्स की अदालतों द्वारा लगाई गई सजाएँ;

(ख) सजा सुनाने में निरंतरता को बढ़ावा देने की आवश्यकता;

(ग) अपराधों के पीड़ितों पर सजा के निर्णयों का प्रभाव;

(घ) आपराधिक न्याय प्रणाली में जनता के विश्वास को बढ़ावा देने की आवश्यकता;

(ई) विभिन्न वाक्यों की लागत और पुनः अपराध को रोकने में उनकी सापेक्ष प्रभावशीलता;

(च) धारा 128 के तहत की गई निगरानी के परिणाम।

**<u>मृत्यु समीक्षक और न्याय अधिनियम, 2009 की धारा 121</u>**

**“121 सजा की सीमाएँ**

(1) धारा 120 के तहत कार्यों का प्रयोग करते समय, परिषद को सजा देने वाले दिशानिर्देशों की वांछनीयता को ध्यान में रखना चाहिए जो उप-धारा (2) से (9) में वर्णित तरीके से संरचित किए जा रहे किसी विशेष अपराध से संबंधित हैं।

(2) दिशानिर्देशों को, यदि अपराध की प्रकृति को देखते हुए यथोचित रूप से व्यवहार्य है, तो उप-धारा (3) में उल्लिखित कारकों में से एक या अधिक के संदर्भ में, अपराध करने से जुड़े मामले की विभिन्न श्रेणियों का वर्णन करना चाहिए जो सामान्य शब्दों में गंभीरता की विभिन्न डिग्री को दर्शाते हैं जिसके साथ अपराध किया जा सकता है।

(3) वे कारक हैं -

(ए) अपराध करने में अपराधी की दोषीता;

(बी) अपराध के कारण, या होने का इरादा या जो पूर्वानुमेय रूप से अपराध के कारण हुआ हो सकता है;

(सी) ऐसे अन्य कारक जिन्हें परिषद प्रश्नगत अपराध की गंभीरता के लिए विशेष रूप से प्रासंगिक मानती है।

(4) दिशानिर्देशों में-

(ए) सजा की सीमा ("अपराध सीमा") निर्दिष्ट की जानी चाहिए, जो परिषद की राय में, अदालत के लिए उस अपराध के लिए दोषी ठहराए गए अपराधी पर अधिरोपित करना उचित हो सकता है, और

(बी) यदि दिशानिर्देश उप-धारा (2) के अनुसार मामले की विभिन्न श्रेणियों का वर्णन करते हैं, तो प्रत्येक श्रेणी के लिए अपराध सीमा के भीतर वाक्यों की सीमा ("श्रेणी सीमा") निर्दिष्ट करें, जो परिषद की राय में, अदालत के लिए किसी ऐसे मामले में अपराधी पर अधिरोपित करना उचित हो सकता है जो उस श्रेणी के भीतर आता है।

(5) दिशा-निर्देश भी होने चाहिए -

(ए) अपराध सीमा में सजा का प्रारंभिक बिंदु निर्दिष्ट करें, या

(बी) यदि दिशानिर्देश उप-धारा (2) के अनुसार मामले की विभिन्न श्रेणियों का वर्णन करते हैं, तो उन श्रेणियों में से प्रत्येक के लिए अपराध सीमा में सजा का प्रारंभिक बिंदु निर्दिष्ट करें।

(6) दिशा-निर्देश होने चाहिए-

(ए) (उप-धारा (2) के अनुसार वर्णित मामलों की श्रेणियों द्वारा पहले से ही ध्यान में नहीं रखे गए किसी भी उत्तेजक या कम करने वाले कारकों को सूचीबद्ध करें, जो किसी भी अधिनियम या कानून के अन्य नियम के आधार पर, न्यायालय को अपराध की गंभीरता पर विचार करते समय ध्यान में रखना आवश्यक है और कोई अन्य उत्तेजक या कम करने वाले कारक जिन्हें परिषद ऐसे विचार के लिए प्रासंगिक मानती है,

(बी) किसी भी अन्य शमन कारकों को सूचीबद्ध करें जिन्हें परिषद अपराध के लिए सजा को कम करने में प्रासंगिक मानती है, और

(सी) अपराधी की पिछली दोषसिद्धि और पैराग्राफ (ए) या (बी) के भीतर ऐसे अन्य कारकों को निर्धारित करने के लिए मानदंड शामिल करें और मार्गदर्शन प्रदान करें जिन्हें परिषद अपराध या अपराधी के संबंध में विशेष महत्व का मानती है।

(7) उप-धारा (6) (ख) के प्रयोजनों के लिए निम्नलिखित की उपेक्षा की जानी चाहिए-

(ए) सजा संहिता की धारा 73 की आवश्यकताएं (दोषी दलीलों के लिए सजा में कमी);

(बी) सजा संहिता की धारा 74,387 और 388 (प्रतिवादियों द्वारा सहायताः सजा में कमी या समीक्षा) और कानून का कोई अन्य नियम जिसके आधार पर एक अपराधी द्वारा अभियोजक या अपराध के अन्वेषक को दी गई सहायता (या देने की पेशकश) के परिणामस्वरूप छूट प्राप्त कर सकता है;

(सी) वाक्यों की समग्रता के बारे में कोई कानून का नियम।

(8) उप-धारा (6) (ग) के अनुसार किए गए प्रावधान को इस तरह से तैयार किया जाना चाहिए कि परिषद अपराध की सीमा के भीतर उचित सजा निर्धारित करने के लिए अपराध के लिए किसी अपराधी को सजा सुनाते समय अदालत की सहायता करने के उद्देश्य से सबसे उचित समझे।

(9) उप-धारा (2) से (8) के अनुसार किया गया प्रावधान अलग-अलग परिस्थितियों या अपराध से जुड़े मामलों के लिए अलग-अलग हो सकता है।

(10) अपराध सीमा में सजा का प्रारंभिक बिंदु -

(ए) उप-धारा (2) के अनुसार दिशानिर्देशों में वर्णित मामले की एक श्रेणी के लिए, उस सीमा के भीतर का वाक्य है जिसे परिषद उस श्रेणी के भीतर के मामलों के लिए उपयुक्त प्रारंभिक बिंदु मानती है-

(i) उप-धारा (6) में उल्लिखित कारकों को ध्यान में रखने से पहले, और

(ii) यह मानते हुए कि अपराधी ने दोषी नहीं होने का अनुरोध किया है, और

(ख) जहां दिशानिर्देश उप-धारा (2) के अनुसार मामले की श्रेणियों का वर्णन नहीं करते हैं, उस सीमा के भीतर सजा है जिसे परिषद अपराध के लिए उपयुक्त प्रारंभिक बिंदु मानती है -

(i) उप-धारा (6) में उल्लिखित कारकों को ध्यान में रखने से पहले, और

(ii) यह मानते हुए कि अपराधी ने दोषी नहीं होने का अनुरोध किया है।

**मृत्यु समीक्षक और न्याय अधिनियम, 2009 की धारा 128**

"128 निगरानी

(1) परिषद को-

(ए) सजा सुनाने के अपने दिशा-निर्देशों के संचालन और प्रभाव की निगरानी करनी चाहिए, और

(बी) इस बात पर विचार करना चाहिए कि पैराग्राफ (क) के आधार पर प्राप्त जानकारी से क्या निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

(2) परिषद को, विशेष रूप से, उप-धारा (1) (ए) के तहत अपने कर्तव्य का निर्वहन करना चाहिए ताकि निम्नलिखित के बारे में निष्कर्ष निकाला जा सके -

(ए) अदालतें सजा सुनाने के दिशा-निर्देशों से कितनी बार और किस हद तक अलग होती हैं;

(बी) वे कारक जो अदालतों द्वारा लगाई गई सजा को प्रभावित करते हैं;

(सी) सजा में निरंतरता को बढ़ावा देने पर दिशानिर्देशों का प्रभाव;

(डी) आपराधिक न्याय प्रणाली में जनता के विश्वास को बढ़ावा देने पर दिशानिर्देशों का प्रभाव।

(3) एक वित्तीय वर्ष के लिए अपनी वार्षिक रिपोर्ट में इस धारा के तहत अपने कार्यों के प्रयोग पर रिपोर्ट करते समय, परिषद को शामिल करना चाहिए -

(ए) उप-धारा (1) (क) और 71 के तहत प्राप्त जानकारी का सारांश।

(बी) उप-धारा (1) (ख) के अधीन परिषद द्वारा निकाले गए किसी निष्कर्ष की रिपोर्ट।"

**सजा अधिनियम 2020 (यू. के.)**

**सजा अधिनियम, 2020 की धारा 3**

**"सजा का स्थगन**

**3 स्थगन आदेश का अवमूल्यन**

(1) इस संहिता में **"स्थगन आदेश" का अर्थ है आदेश में निर्दिष्ट तिथि तक एक या एक से अधिक अपराधों के संबंध में एक अपराधी पर सजा पारित करने को स्थगित करने वाला आदेश, ताकि एक अदालत, अपराधी के साथ व्यवहार करने में, निम्नलिखित के संबंध में सक्षम हो सके -**

**(ए) दोषसिद्धि के बाद अपराधी का आचरण (जिसमें, जहां उपयुक्त हो, अपराधी द्वारा अपराध के लिए क्षतिपूर्ति करना भी शामिल है), या**

**(बी) अपराधी की परिस्थितियों में कोई परिवर्तन।**

(2) एक स्थगन आदेश स्थगन की अवधि के दौरान अपराधी के आचरण के रूप में आवश्यकताओं ("स्थगन आवश्यकताओं") को लागू कर सकता है।

**(3) स्थगन आवश्यकताओं में शामिल हो सकते हैं-**

**(ए) स्थगन की अवधि के सभी या भाग के दौरान अपराधी के निवास के रूप में आवश्यकताएं;**

**(बी) पुनर्स्थापनात्मक न्याय आवश्यकताएँ।"**

(एम्फैस की आपूर्ति की गई)

**सजा अधिनियम, 2020 की धारा 5**

**"5 स्थगन आदेश देना**

**(1) न्यायालय अपराध के संबंध में स्थगन आदेश केवल तभी दे सकता है जब -**

(ए) अपराधी सहमति देता है,

(बी) अपराधी किसी भी स्थगन आवश्यकताओं का पालन करने का वचन देता है जिसे अदालत लागू करने का प्रस्ताव करती है,

(सी) यदि उन आवश्यकताओं में पुनर्स्थापनात्मक न्याय की आवश्यकता शामिल है, तो धारा 7 (2) (पुनर्स्थापनात्मक न्याय गतिविधि में प्रतिभागियों की सहमति) संतुष्ट है, और

(डी) न्यायालय अपराध की प्रकृति और अपराधी के चरित्र और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए संतुष्ट है कि आदेश देना न्याय के हित में होगा।

**(2) आदेश में धारा 3 (1) के तहत निर्दिष्ट तिथि आदेश दिए जाने की तारीख के बाद 6 महीने से अधिक नहीं हो सकती है।**

(3) एक अदालत जो स्थगन आदेश देती है, उसे आदेश की एक प्रति तुरंत देनी चाहिए -

(ए) अपराधी को,

(बी) यदि यह उन स्थगन आवश्यकताओं को लागू करता है जिनमें पुनर्स्थापनात्मक न्याय की आवश्यकता शामिल है, प्रत्येक व्यक्ति के लिए जो संबंधित गतिविधि में भागीदार होगा (धारा 7 (1) देखें),

(सी) जहाँ परिवीक्षा सेवा प्रदाता के एक अधिकारी को पर्यवेक्षक के रूप में कार्य करने के लिए नियुक्त किया गया है, उस प्रदाता के लिए, और

(डी) जहां किसी व्यक्ति को धारा 8 (1) (ख) के तहत पर्यवेक्षक के रूप में कार्य करने के लिए नियुक्त किया गया है, उस व्यक्ति के लिए।

(4) एक अदालत जो स्थगन आदेश देती है, किसी भी अधिनियम के बावजूद उसी अवसर पर अपराधी को रिमांड पर नहीं ले सकती है।.

(एम्फैस आपूर्ति की गई)

**सजा अधिनियम, 2020 की धारा 6**

**"6 स्थगन आदेश का प्रभाव**

**(1) जहाँ किसी अपराध के संबंध में स्थगन आदेश दिया गया है, वहाँ अपराध के लिए अपराधी से निपटने वाले न्यायालय का संबंध हो सकता है -**

**(ए) दोषसिद्धि के बाद अपराधी का आचरण, या**

**(बी) अपराधी की परिस्थितियों में कोई परिवर्तन।**

(एम्फैस आपूर्ति की गई)

**सजा अधिनियम, 2020 की धारा 30**

**"पूर्व-वाक्य रिपोर्ट**

**30 पूर्व-वाक्य रिपोर्ट आवश्यकताएँ**

**(1) यह धारा वहां लागू होती है, जहां इस संहिता के किसी भी प्रावधान के आधार पर, एक राय बनाने के संबंध में अदालत में पूर्व-वाक्य रिपोर्ट की आवश्यकताएं लागू होती हैं।**

**(2) यदि अपराधी की आयु 18 वर्ष या उससे अधिक है, तो अदालत को राय बनाने से पहले एक पूर्व-वाक्य रिपोर्ट प्राप्त करनी चाहिए और उस पर विचार करना चाहिए, जब तक कि मामले की परिस्थितियों में, यह नहीं समझता है कि पूर्व-वाक्य रिपोर्ट प्राप्त करना अनावश्यक है।**

(3) यदि अपराधी की आयु 18 वर्ष से कम है, तो अदालत को राय बनाने से पहले एक पूर्व-वाक्य रिपोर्ट प्राप्त करनी चाहिए और उस पर विचार करना चाहिए जब तक कि -

(क) अपराधी के संबंध में प्राप्त एक पूर्व-वाक्य रिपोर्ट मौजूद है, और

(ख) न्यायालय विचार करता है-

(i) मामले की परिस्थितियों में, और

(ii) उस रिपोर्ट में निहित जानकारी को ध्यान में रखते हुए या, यदि एक से अधिक, सबसे हाल की रिपोर्ट है, कि वाक्य-पूर्व रिपोर्ट प्राप्त करना अनावश्यक है।

**(4) जहां कोई अदालत एक राय बनाने से पहले एक पूर्व-वाक्य रिपोर्ट प्राप्त नहीं करती है और उस पर विचार नहीं करती है, जिसके संबंध में पूर्व-वाक्य रिपोर्ट की**

**<u>आवश्यकताएं लागू होती हैं, कोई भी अभिरक्षा सजा या सामुदायिक सजा इस तथ्य से अमान्य नहीं होती है कि उसने ऐसा नहीं किया था।</u>**

(एम्फैस आपूर्ति की गई)

**सजा अधिनियम, 2020 की धारा 31**

**“31 "पूर्व-वाक्य रिपोर्ट" आदि का अर्थ**

**"पूर्व-वाक्य रिपोर्ट"**

(1) इस संहिता में "पूर्व-वाक्य रिपोर्ट" का अर्थ है एक रिपोर्ट जो-

(ए) एक अपराधी से निपटने के सबसे उपयुक्त तरीके को निर्धारित करने में अदालत की सहायता करने की दृष्टि से एक उपयुक्त अधिकारी द्वारा बनाई या प्रस्तुत की जाती है, और

(बी) राज्य सचिव द्वारा बनाए गए नियमों द्वारा निर्धारित किए गए तरीके से प्रस्तुत किए गए ऐसे मामलों के बारे में जानकारी शामिल है।

40. हम पाते हैं कि न्यूजीलैंड द्वारा एक विस्तृत और विस्तृत अभ्यास किया गया है। हम जिस पर चर्चा कर चुके हैं, उसे पहले ही 74 में लिया जा चुका है। उपरोक्त देशों द्वारा विचार।चूँकि यह एक महत्वपूर्ण पहलू है जो भारत सरकार के ध्यान से छूट गया है, हम न्याय विभाग, विधि और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार को एक व्यापक नीति शुरू करने पर विचार करने की सिफारिश करते हैं, संभवतः एक विशिष्ट सजा नीति के उद्देश्य से विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों से युक्त एक विधिवत गठित सजा आयोग से एक उचित रिपोर्ट प्राप्त करने के माध्यम से। हम भारत संघ से अनुरोध

करते हैं कि वह आज से छह महीने की अवधि के भीतर एक हलफनामे के माध्यम से हमारे सुझाव का जवाब दे।

41. इस संबंध में, हम भारत के विधि आयोग की 47 वीं रिपोर्ट, डॉ. न्यायमूर्ति वी. एस. मलिमथ की अध्यक्षता में आपराधिक न्याय सुधार समिति की रिपोर्ट (2003), डॉ. एन. आर. माधव मेनन की अध्यक्षता में आपराधिक न्याय पर राष्ट्रीय नीति के मसौदे पर समिति की रिपोर्ट और इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों को रिकॉर्ड पर रखना चाहते हैं ताकि एक विशिष्ट सजा नीति की उभरती आवश्यकता का संकेत दिया जा सके।

**47. भारत के विधि आयोग की रिपोर्ट**

अध्याय 7

सुधारों की इच्छा-विचार किए गए

सभी अधिनियमों के लिए सामान्य बिंदु

"7.44. एक उचित सजा कई कारकों का एक संयोजन है, जिसमें अपराध की प्रकृति, अपराध को बढ़ाने या बढ़ाने वाली परिस्थितियाँ, अपराधी का पूर्व आपराधिक रिकॉर्ड, यदि कोई हो, तो अपराधी की उम्र, अपराधी का पेशेवर और सामाजिक रिकॉर्ड, शामिल हैं। शिक्षा के संदर्भ में अपराधी की पृष्ठभूमि। घरेलू जीवन, संयम और सामाजिक समायोजन, अपराधी की भावनात्मक और मानसिक स्थिति, अपराधी के पुनर्वास की संभावना, अपराधी के समुदाय में सामान्य जीवन में लौटने की संभावना, अपराधी के उपचार या प्रशिक्षण की संभावना, यह संभावना कि सजा इस अपराधी या अन्य लोगों द्वारा अपराध के लिए निवारक के रूप में काम कर सकती है, और

वर्तमान समुदाय को शामिल विशेष प्रकार के अपराध के संबंध में इस तरह के निवारक के लिए, यदि कोई हो, आवश्यकता है।

**डॉ. न्यायमूर्ति वी. एस. मलिमथ की अध्यक्षता में आपराधिक न्याय प्रणाली के सुधारों पर समिति की रिपोर्ट, खंड 1, मार्च (2003)**

"14.4 दिशानिर्देश भेजने की आवश्यकता

14.4.1 भारतीय दंड संहिता ने इसके लिए अपराध और दंड निर्धारित किए हैं। कई अपराधों के लिए केवल अधिकतम सजा निर्धारित की गई है और कुछ अपराधों के लिए न्यूनतम सजा निर्धारित की जा सकती है। **न्यायाधीश ने कहा है वैधानिक सीमाओं के भीतर सजा देने में व्यापक विवेकाधिकार। मामले की परिस्थितियों को देखते हुए सबसे उपयुक्त सजा का चयन करने के संबंध में न्यायाधीश को अब कोई मार्गदर्शन नहीं दिया गया है। इसलिए प्रत्येक न्यायाधीश अपने निर्णय के अनुसार विवेक का प्रयोग करता है। इसलिए कोई एकरूपता नहीं है। कुछ न्यायाधीश उदार होते हैं और कुछ न्यायाधीश कठोर होते हैं। निर्देशित विवेक का प्रयोग करना अच्छा नहीं है, भले ही न्यायाधीश ही विवेक का प्रयोग करता हो। कुछ देशों में दंड संहिता में सजा देने के विकल्प और सजा देने के दिशानिर्देश कानूनों के बारे में मार्गदर्शन दिया गया है। सजा देने के मामले में अनिश्चितता को कम करने के लिए हमारे देश में इस तरह के कानून की आवश्यकता है।** ऐसे कई कारक हैं जो वैकल्पिक वाक्यों को निर्धारित करने में प्रासंगिक हैं। इसके लिए एक विशेषज्ञ वैधानिक निकाय द्वारा पूरी तरह से जांच की आवश्यकता होती है।

14.4.5 **कभी-कभी अदालतें अनावश्यक रूप से कठोर होती हैं जबकि कभी-कभी वे उदार होती हैं। हम पहले से ही उन पहलुओं पर ध्यान दे चुके हैं जो सर्वोच्च न्यायालय ने कहा है कि यह तय करने में प्रासंगिक हैं कि मौत की सजा देने के**

**लिए दुर्लभतम मामलों में से कौन से दुर्लभतम हैं। लेकिन ऐसे मामलों में भी एकरूपता की कमी है। बलात्कार के कुछ मामलों में बरी होने से सार्वजनिक विरोध हुआ। इसलिए सजा सुनाने के मामले में कुछ विनियमन और पूर्वानुमेयता लाने के लिए, समिति उच्चतम न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश या आपराधिक कानून में अनुभवी उच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता में अभियोजन, कानूनी पेशे, पुलिस, सामाजिक वैज्ञानिक और महिला प्रतिनिधि का प्रतिनिधित्व करने वाले अन्य सदस्यों के साथ सजा पर दिशानिर्देश निर्धारित करने के लिए एक वैधानिक समिति की सिफारिश करती है।**

(जोर दिया गया)

**आपराधिक न्याय पर राष्ट्रीय नीति के मसौदे पर समिति की रिपोर्ट की अध्यक्षता प्रो.(डॉ.) एन. आर. माधव मेनन, जुलाई, 2007**

"5.5 सजा और प्रेषण

5.5.1 कानूनों में अब उपलब्ध दंड के चयन में सीमित विकल्पों और अक्सर लगाए गए दंड में अपर्याप्त प्रतिरोध को देखते हुए, आपराधिक न्याय प्रशासन में दंड के दर्शन, औचित्य और प्रभाव पर कुछ गंभीर पुनर्विचार करना होगा। जुर्माने की मात्रा एक सदी से भी पहले निर्धारित की गई थी। व्यवहार में कारावास को विभिन्न प्रथाओं के माध्यम से बहुत कम अवधि तक कम कर दिया जाता है, भले ही यह जीवन भर के लिए हो। **सजा सुनाने में समानता नहीं है सख्ती से पीछा किया गया और सजा के मानदंडों और प्रक्रियाओं को मानकीकृत करने के लिए अभी तक कोई गंभीर प्रयास नहीं किया गया है। इस तरह की असंगत सजा प्रथाओं के परिणामस्वरूप कई मामलों में सजा के उद्देश्यों को पूरा नहीं किया जाता है।**

5.5.2 आपराधिक न्याय के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए दंड और इसकी मात्रा के निर्धारण के मामले में नीतिगत विकल्प क्या हैं? क्या सामुदायिक सेवा को एक प्रभावी दंड बनाया जा सकता है और इसे कैसे व्यवस्थित किया जा सकता है? आपराधिक मामलों में परिवीक्षा को व्यवहार का एक प्रमुख हिस्सा कैसे बनाया जाए? सजा सुनाने में समानता और निष्पक्षता कैसे प्राप्त की जाए? ये और इससे संबंधित कई सवाल भारत में गंभीरता से भी नहीं उठाए जाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप व्यवस्था अपने आप में एक अंत के रूप में काम करती प्रतीत होती है।

**यदि सजा आपराधिक न्याय के उद्देश्य को पूरा करती है तो कानून और सजा देने की प्रथा में एक क्रांतिकारी बदलाव होना चाहिए। प्रणाली को सुसंगत और उद्देश्यपूर्ण बनाने के लिए सजा देने वाले दिशानिर्देशों का एक समूह वैधानिक रूप से विकसित किया जा सकता है। अनिवार्य न्यूनतम वाक्यों को तय करना एक सार्थक समाधान नहीं हो सकता है। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि सजा में विकल्पों को बढ़ाने और प्रणाली के अन्य अधिकारियों (जैसे परिवीक्षा सेवा और सुधारात्मक प्रशासन) को सजा देने की प्रक्रिया और प्रशासन में आवाज उठाने के लिए नीति होनी चाहिए।**

**संक्षेप में, यदि आपराधिक न्याय को जनता के दिमाग में अपनी विश्वसनीयता बनाए रखना है, तो सजा और सजा पर नीति योजनाकारों के तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता होती है।**

5.5.3 सजा पर एक राष्ट्रीय नीति निम्नलिखित मुद्दों को संबोधित करने का प्रयास करेगीः

(i) दंड के मामले में केवल जुर्माने और कारावास के विकल्प को सीमित करने के बजाय अधिक विकल्प प्रदान करने के लिए आपराधिक कानून की आवश्यकता।

(ii) दंड की मात्रा के संबंध में, यह सुनिश्चित करने के लिए निरंतर समीक्षा की आवश्यकता है कि यह न्याय और असमानता के उद्देश्यों को पूरा करता है, इसी तरह की स्थितियों में कम हो जाता है।

(iii) अल्पकालिक कारावास से बचने और जेलों और अन्य अभिरक्षा संस्थानों की भीड़भाड़ को रोकने के लिए एक नीति, जिसे सभी स्तरों पर सख्ती से अपनाया जाना चाहिए।

(iv) प्रत्येक सजा के संबंध में सजा देने के लिए विशिष्ट दिशा-निर्देश विकसित करने की आवश्यकता है।

(v) उचित सजा तय करने के लिए सुधारात्मक विशेषज्ञों को शामिल करने वाले एक संस्थागत तंत्र की भी आवश्यकता है।

(जोर दिया गया)

**पूर्वाभास**

**धनंजय चटर्जी बनाम डब्ल्यू. बी. राज्य, (1994) 2 एस. सी. सी. 220**

**"14.** हाल के वर्षों में, बढ़ती अपराध दर-विशेष रूप से महिलाओं के खिलाफ हिंसक अपराध ने अदालतों द्वारा आपराधिक सजा को एक विषय बना दिया है चिंता की बात है। **आज स्वीकार की गई असमानताएँ हैं। कुछ अपराधियों को बहुत कठोर सजा मिलती है जबकि कई को अनिवार्य रूप से समतुल्य अपराध के लिए बहुत अलग सजा मिलती है और आश्चर्यजनक रूप से बड़ी संख्या में दंडित भी नहीं किया जाता है जिससे अपराधी को प्रोत्साहित किया जाता है और अंततः न्याय प्रणाली की विश्वसनीयता को कमजोर करके पीड़ित होता है। बेशक, सजा के अधिरोपण से संबंधित कोई कट एंड ड्राई फॉर्मूला निर्धारित करना संभव नहीं है, लेकिन सजा का**

**उद्देश्य यह देखना होना चाहिए कि अपराध को बख्शा न जाए और अपराध की शिकार व्यक्ति के साथ-साथ समाज को भी इस बात का संतोष हो कि उसके साथ न्याय किया गया है। विशिष्ट विधान के अभाव में सजा देने में, न्यायाधीशों को विभिन्न कारकों पर विचार करना चाहिए और उन सभी कारकों पर विचार करने और स्थिति का समग्र दृष्टिकोण लेने के बाद, ऐसी सजा देनी चाहिए जिसे वे उचित मानते हैं। उग्रकारी कारकों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है और इसी तरह कम करने वाली परिस्थितियों को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।**

15. हमारी राय में, किसी दिए गए मामले में सजा का पैमाना अपराध के अत्याचार पर निर्भर होना चाहिए; अपराधी का आचरण और पीड़ित की रक्षाहीन और असुरक्षित स्थिति।उचित सजा का अधिरोपण वह तरीका है जिसमें अदालतें अपराधियों के खिलाफ न्याय के लिए समाज की पुकार का जवाब देती हैं। न्याय की मांग है कि अदालतों को अपराध के लिए उपयुक्त सजा देनी चाहिए ताकि अदालतें अपराध के प्रति सार्वजनिक घृणा को प्रतिबिंबित कर सकें। अदालतों को उचित सजा देने पर विचार करते समय न केवल अपराधी के अधिकारों को ध्यान में रखना चाहिए, बल्कि अपराध के पीड़ितों और बड़े पैमाने पर समाज के अधिकारों को भी ध्यान में रखना चाहिए।"

(जोर दिया गया)

**स्वामी श्रद्धानंद (2) बनाम कर्नाटक राज्य (2008) 13 एस. सी. सी. 767**

**"48.** यही बात का अंत नहीं है। **कमी के साथ जोड़ा गया आपराधिक न्याय प्रणाली इस न्यायालय द्वारा भी सजा देने की प्रक्रिया में निरंतरता की कमी है। ऊपर उल्लेख किया गया है कि बचन सिंह [(1980) 2 एस. सी. सी. 684:1980 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 580] ने दुर्लभतम मामलों के सिद्धांत को निर्धारित किया।माछी सिंह**

**[(1983) 3 एस. सी. सी. 470:1983 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 681] ने व्यावहारिक अनुप्रयोग के लिए सिद्धांत को हत्या के मामलों की पांच निश्चित श्रेणियों में स्पष्ट किया और ऐसा करने से मृत्युदंड देने का दायरा भी काफी बढ़ गया। लेकिन दुर्भाग्यपूर्ण वास्तविकता यह है कि बाद के फैसलों में न तो दुर्लभतम मामलों का सिद्धांत और न ही माची सिंह [(1983) 3 एस. सी. सी. 470:1983 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 681] श्रेणियों का समान रूप से और लगातार पालन किया गया।**

xxx xxx xxx

**50. एमनेस्टी इंटरनेशनल इंडिया और पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज, तमिलनाडु और पुडुचेरी द्वारा संयुक्त रूप से संकलित *"लेथल लॉटरी, द डेथ पेनल्टी इन इंडिया"* नामक एक रिपोर्ट में भी यही बात कहीं अधिक विस्तार से कही गई है। यह रिपोर्ट 1950 से 2006 तक मृत्युदंड के मामलों में उच्चतम न्यायालय के फैसलों के अध्ययन पर आधारित है। रिपोर्ट में दिए गए मुख्य बिंदुओं में से एक (अध्याय 2 से 4 देखें) मौत की सजा देने में न्यायालय की एकरूपता और निरंतरता की कमी के बारे में है।**

**51.** इस मामले की सच्चाई यह है कि मृत्युदंड का प्रश्न व्यक्तिपरक तत्व से मुक्त नहीं है और इस न्यायालय द्वारा मृत्युदंड की पुष्टि या इसे कम करना पीठ का गठन करने वाले न्यायाधीशों की व्यक्तिगत इच्छा पर निर्भर करता है।

**52. सभी प्रमुख अपराधों से समान रूप से प्रभावी ढंग से निपटने में आपराधिक न्याय प्रणाली की असमर्थता और न्यायालय द्वारा सजा देने की प्रक्रिया में एकरूपता की कमी अंतिम परिणामों में एक उल्लेखनीय असंतुलन का कारण बनती है। एक ओर ऐसे मामलों का एक छोटा समूह दिखाई देता है जिसमें हत्या के दोषी को इस**

**अदालत द्वारा उसकी मौत की सजा की पुष्टि होने पर फांसी पर चढ़ाया जाता है और दूसरी ओर ऐसे मामलों का एक बहुत बड़ा क्षेत्र है जिसमें समान या उससे कहीं अधिक विद्रोही प्रकार की हत्या करने वाले अपराधी को सजा देने में अदालत द्वारा निरंतरता की कमी के कारण उसकी जान दी जाती है या इससे भी बदतर अपराधी को आपराधिक न्याय प्रणाली में कमियों के कारण बिना सजा के भागने की अनुमति दी जाती है। इस प्रकार समग्र रूप से बड़ी तस्वीर असममित और एकतरफा हो जाती है और न्याय के आपराधिक प्रशासन की प्रणाली का एक खराब प्रतिबिंब प्रस्तुत करती है। यह स्थिति इस न्यायालय के लिए चिंता का विषय है और इसे ठीक करने की आवश्यकता है।**

(जोर दिया गया)

**सोमन बनाम केरल राज्य (2013) 11 एस. सी. सी. 382**

"15. अपराधी को सजा देना आपराधिक न्याय प्रदान करने के केंद्र में है, लेकिन हमारे देश में, यह आपराधिक न्याय के प्रशासन का सबसे कमजोर हिस्सा है। आरोपों का दोषी ठहराए जाने के बाद मुकदमे का सामना कर रहे आरोपी को न्यायसंगत सजा देने में निचली अदालत की सहायता के लिए कोई विधायी या न्यायिक रूप से निर्धारित दिशानिर्देश नहीं हैं। *पंजाब राज्य बनाम प्रेम सागर* [(2008) 7 एस. सी. सी. 550:(2008) 3 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 183] इस न्यायालय ने उतना ही स्वीकार किया और निम्नानुसार टिप्पणी कीः(एस. सी. सी. पी. 552, पैरा 2)

> "2. हमारी न्यायिक प्रणाली में, हम सजा देने के संबंध में कानूनी सिद्धांतों को विकसित करने में सक्षम नहीं हुए हैं। जिस उद्देश्य और उद्देश्य के लिए अपराधी को सजा दी जाती है, उसके संबंध में टिप्पणियों को छोड़कर उच्च न्यायालयों ने कोई दिशा-निर्देश जारी नहीं किए हैं। अन्य विकसित देशों ने भी

ऐसा किया है। कुछ हलकों में इस संबंध में गंभीर चिंता व्यक्त की गई है। माधव मेनन समिति और मलिमथ समिति जैसी कुछ समितियों ने सजा देने के दिशा-निर्देशों को लागू करने की वकालत की है।"

**<u>दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 354</u>**

**"354. निर्णय की भाषा और विषय-वस्तु-**

(1) इस संहिता द्वारा अन्यथा स्पष्ट रूप से प्रदान किए जाने के अलावा, धारा 353 में निर्दिष्ट प्रत्येक निर्णय, -

(क) न्यायालय की भाषा में लिखा जाएगा;

(ख) निर्धारण के लिए बिंदु या बिंदु, उस पर निर्णय और निर्णय के कारण शामिल होंगे;

(ग) उस अपराध (यदि कोई हो) को निर्दिष्ट करेगा, और भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) या अन्य कानून की धारा जिसके तहत आरोपी को दोषी ठहराया गया है और जिस सजा के लिए उसे सजा सुनाई गई है;

(घ) यदि यह बरी करने का निर्णय है, तो उस अपराध को बताएगा जिसमें आरोपी को बरी किया गया है और निर्देश देगा कि उसे मुक्त कर दिया जाए।

(2) जब भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) के तहत दोषसिद्धि होती है और यह संदेह होता है कि उस संहिता की दो धाराओं में से किसके तहत या एक ही धारा के दो भागों में से किसके तहत अपराध पड़ता है, तो न्यायालय इसे स्पष्ट रूप से व्यक्त करेगा और वैकल्पिक रूप से निर्णय पारित करेगा।

(3) जब दोषसिद्धि मृत्युदंड या वैकल्पिक रूप से आजीवन कारावास या 80 की अवधि के कारावास से दंडनीय अपराध के लिए हो। वर्षों तक, निर्णय में दी गई सजा के कारणों और मौत की सजा के मामले में, ऐसी सजा के विशेष कारणों का उल्लेख किया जाएगा।

(4) जब दोषसिद्धि एक वर्ष या उससे अधिक की अवधि के कारावास से दंडनीय अपराध के लिए होती है, लेकिन न्यायालय तीन महीने से कम की अवधि के लिए कारावास की सजा देता है, तो वह ऐसी सजा देने के लिए अपने कारणों को दर्ज करेगा, जब तक कि सजा न्यायालय के उदय तक कारावास की न हो या जब तक कि इस संहिता के प्रावधानों के तहत मामले की संक्षिप्त सुनवाई न की गई हो।

(5) जब किसी व्यक्ति को मौत की सजा सुनाई जाती है, तो सजा यह निर्देश देगी कि उसे तब तक फांसी पर लटका दिया जाए जब तक कि वह मर न जाए।

(6) धारा 117 या धारा 138 की उप-धारा (2) के तहत प्रत्येक आदेश और धारा 125, धारा 145 या धारा 147 के तहत किए गए प्रत्येक अंतिम आदेश में निर्धारण के लिए बिंदु या बिंदु, उस पर निर्णय और निर्णय के कारण शामिल होंगे।.

42. सी. आर. पी. सी., 1973 की धारा 354 हालांकि केवल निर्णय की भाषा और विषय-वस्तु से संबंधित है, इस तथ्य पर भी प्रकाश डालती है कि एक निर्णय में दो अलग-अलग भाग होते हैं, जिसमें पहला भाग दोषसिद्धि से संबंधित होता है और दूसरा सजा से संबंधित होता है। उपरोक्त प्रावधान की उप-धारा (1) (सी) का अर्थ यह समझना होगा कि एक न्यायाधीश से अपेक्षा की जाती है कि वह परेशान करने वाली और कम करने वाली परिस्थितियों पर विचार करेगा। इस मामले को ध्यान में रखते हुए, किए गए अपराध की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, उपरोक्त प्रावधान की उप-धारा (3) अधिक स्पष्टीकरणात्मक है। जैसा कि एक दोषी को सजा पर सुना जाता है,

यह इस प्रकार है कि सजा पर किसी भी निर्णय को न्यायाधीश द्वारा न्यायिक विवेक के प्रयोग के कारणों को इंगित करना होता है।

**<u>तथ्यों पर</u>**

**<u>2023 की आपराधिक अपील संख्या 3924 और 2023 की आपराधिक अपील संख्या 3926-3927।</u>**

43. 01.12.2021 पर हुई घटना के लिए 2021 के अपराध संख्या 137 में एक प्राथमिकी दर्ज की गई थी। उक्त शिकायत पीड़ित की मां ने 02.12.2021 पर दर्ज कराई थी। तदनुसार, भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 376 एबी (इसके बाद **"आईपीसी, 1860"** के रूप में संदर्भित) और यौन अपराधों से बच्चों के संरक्षण अधिनियम, 2012 की धारा 4 (इसके बाद अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धारा 3 (2) (वी) के साथ पढ़ा गया **पॉक्सो अधिनियम, 2012** (इसके बाद **"एससी/एसटी अधिनियम, 1989"** के रूप में संदर्भित) के तहत मामला दर्ज किया गया था। संक्षेप में अभियोजन पक्ष का मामला यह है कि आरोपी ने एक नाबालिग लड़की का फायदा उठाया और बलात्कार का अपराध किया

44. आरोपी को 12.12.2021 पर गिरफ्तार किया गया था। उन्हें संबंधित न्यायिक मजिस्ट्रेट के सामने 13.12.2021 पर पेश किया गया और 24.12.2021 तक न्यायिक हिरासत में भेज दिया गया। वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से 24.12.2021 और 05.01.2022 के आदेशों द्वारा रिमांड को और बढ़ा दिया गया था।12.01.2022 पर, अपराधों के लिए आरोप पत्र दायर किया गया था। आरोपी को एक बार फिर वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से 15.01.2022 पर पेश किया गया। अभियुक्त का प्रतिनिधित्व करने वाला कोई वकील नहीं था, और उसे पेश करने के लिए मामला 24.01.2022 पर रखा गया था।

45. 20.01.2022 पर, एफ. एस. एल. रिपोर्ट के बिना, दायर आरोप पत्र को रिकॉर्ड में ले लिया गया था। तदनुसार, संज्ञान लिया गया। अभियोजक को वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से आरोपी की उपस्थिति सुनिश्चित करने का निर्देश दिया गया था। अभियुक्त ने एक वकील को नियुक्त करने में अपनी असमर्थता का नाटक किया क्योंकि वह सलाखों के पीछे था। आरोप तय करने और दस्तावेजों की आपूर्ति के लिए मामले को 22.01.2022 तक स्थगित कर दिया गया था।

46. उस दिन यानी 22.01.2022 अभियुक्त की ओर से पेश होने वाले वकील को दस्तावेज़ प्रदान किए गए थे, बिना कोई समय दिए और यह सुनिश्चित किए बिना कि ये दस्तावेज़ वास्तव में अभियुक्त को दिखाए गए थे, उसके बाद उसके वकील के साथ उचित परामर्श के बाद, आरोप तय करने पर सीधे दलीलें सुनी गईं। इसके बाद, आरोप तय किए गए और वर्चुअल मोड के माध्यम से आरोपी को समझाया गया। उसी तारीख को अभियोजन पक्ष के गवाहों को बुलाने का आदेश पारित किया गया था। आश्चर्यजनक रूप से, जांच अधिकारी द्वारा एक ही दिन में चार गवाहों के साक्ष्य दर्ज करने के लिए एक आवेदन दायर किया गया था, क्योंकि प्राप्त एक गोपनीय जानकारी से संकेत मिलता है कि आरोपी के परिवार के सदस्यों का दबाव था। अभियुक्त या उसके वकील को कोई नोटिस नहीं दिया गया था, और स्पष्ट रूप से गवाह संरक्षण योजना, 2018 को ध्यान में रखे बिना आदेश पारित किया गया था। न्यायालयों के लिए वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग नियम, 2020 के प्रावधानों की अवहेलना करते हुए, गवाहों के बयान दर्ज किए गए।

47. दो दिनों के बाद यानी 24.01.2022, जाँच अधिकारी सहित शेष गवाहों से पूछताछ की गई। यह दिखाने के लिए कोई सामग्री नहीं थी कि आरोपी उस समय मौजूद था। बचाव पक्ष के वकील द्वारा एक सप्ताह के लिए स्थगन के लिए की गई याचिका को

बिना किसी ठोस कारण के खारिज कर दिया गया था। अकेले दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के तहत पूछताछ के उद्देश्य से, आरोपी को वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से लाया गया था। जल्दबाजी में पूछताछ की गई। बचाव पक्ष के वकील द्वारा एक सप्ताह के लिए स्थगन की बार-बार की गई याचिका को एक बार फिर खारिज कर दिया गया, जबकि अंततः एक दिन के स्थगन की सुविधा प्रदान की गई।

48. अगले दिन यानी 25.01.2022, बचाव पक्ष द्वारा गवाहों को पेश करने के लिए समय की प्रार्थना करते हुए एक आवेदन दायर किया गया था। उस दिन ही गवाहों को पेश प्रस्तुत के निर्देश के साथ मामला पारित कर दिया गया था।दलीलें सुनी गईं, जिस दौरान अभियोजन पक्ष ने 10 मिनट तक दलीलें दीं, जबकि बचाव पक्ष ने 3 घंटे तक बहस की। तदनुसार यह शाम 6:30 बजे समाप्त हुआ। फैसला शाम करीब 7 बजे दिया गया, जो लगभग 27 पृष्ठों में चला, जिसमें 59 पैराग्राफ थे। यह ज्ञात नहीं है कि गवाहों के बयानों की प्रतियां कैसे तैयार की गईं और अवलोकन के लिए रखी गईं। मान लीजिए, बचाव पक्ष के वकील के पास भी वे प्रतियां नहीं थीं।

49. इसके दो दिन बाद यानी 27.01.2022, मामले को सजा सुनाने के लिए पोस्ट किया गया। अभियुक्त को सुनने के बाद निचली अदालत ने मौत की सजा सुनाई। उच्च न्यायालय ने, विवादित निर्णय द्वारा, अभिलेखों की मांग की और उन्हें अच्छी तरह से देखा, यह पाते हुए कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 207,226,227 और 230 का पालन नहीं किया गया है, निचली अदालत द्वारा दी गई दोषसिद्धि और सजा को दरकिनार कर दिया और नए सिरे से सुनवाई का आदेश दिया। संयोगवश, विचारण न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण में त्रुटि पाई गई। 50. योग्यता के आधार पर विवादित निर्णय देते हुए, सूचना देने वाले ने 2023 की आपराधिक अपील संख्या 3924 दायर की है। उच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों से व्यथित,

विद्वत विचारण न्यायाधीश ने 2023 की आपराधिक अपील संख्या 3926-3927 दायर की है।

**2023 की आपराधिक अपील संख्या 3925**

51. 2023 की आपराधिक अपील संख्या 3925 उसी विद्वान न्यायाधीश द्वारा दायर की गई है, जिन्होंने उच्च न्यायालय की एक समन्वित पीठ द्वारा की गई टिप्पणियों के खिलाफ, जिसने समन्वय पीठ द्वारा दिए गए पहले के फैसले पर ध्यान दिया था, इसी तरह की सजा सुनाई और आरोपी को शेष प्राकृतिक जीवन के लिए आजीवन कारावास की सजा सुनाई। यह हमारे संज्ञान में लाया गया है कि शुरू की गई अनुशासनात्मक कार्यवाही को प्रशासनिक पक्ष से हटा दिया गया था। हालाँकि, 2023 के आई. ए. सं. 29814 में विद्वान न्यायाधीश द्वारा एक आवेदन दायर किया गया है जिसमें आरोप लगाया गया है कि उनसे कुछ प्रशासनिक कार्य छीन लिए गए हैं, जाहिरा तौर पर। विवादित निर्णयों का आधार, और इसलिए, उसे या तो उक्त शक्ति के साथ बहाल किया जाना चाहिए या किसी अन्य स्थान पर स्थानांतरित किया जाना चाहिए।

52. जहाँ तक 2023 की आपराधिक अपील संख्या 3925 का संबंध है, पीड़ित की ओर से कोई अपील दायर नहीं की गई है। इसलिए, विचार के लिए एकमात्र प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी के खिलाफ की गई टिप्पणी उचित है या नहीं, विशेष रूप से जब उसकी बात नहीं सुनी गई है। तथ्यों पर, इस मामले में भी, मुकदमा एक ही दिन में शुरू और समाप्त हो गया था।

**ऐप्पलेंट के स्वयं पर प्रस्तुतियाँ**

**2023 की आपराधिक अपील संख्या 3924 और 2023 की आपराधिक अपील संख्या 3926-3927।**

53. सूचक और विद्वत विचारण न्यायाधीश दोनों की ओर से पेश वरिष्ठ वकील श्री विकास सिंह ने कहा कि कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया का पालन किया गया है। अपीलार्थी ने पॉक्सो अधिनियम, 2012 के तहत निहित प्रावधानों के साथ पठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 309 की कठोरता को ध्यान में रखा है। यह मानते हुए भी कि एक प्रक्रियात्मक दोष है, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 465 के तहत निहित जनादेश को देखते हुए प्रेषण की कोई आवश्यकता नहीं है। मुकदमे के दौरान, प्रतिवादी-अभियुक्त के वकील ने कोई गंभीर आपत्ति नहीं जताई है।

**2023 की आपराधिक अपील संख्या 3925**

यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि अपीलार्थी ने अपने न्यायिक कार्य का निर्वहन किया है और इसलिए, उसे सुने बिना कोई भी कार्रवाई कानून के विपरीत है। हालाँकि आरोप हटा दिए गए हैं, लेकिन की गई टिप्पणियाँ उनके भविष्य के कैरियर की प्रगति के लिए हानिकारक होंगी। अभियुक्त की पृष्ठभूमि थी और इसलिए, निचली अदालत ने उचित सावधानी बरती। यह एक ऐसा मामला है जिसमें बचाव पक्ष की ओर से कोई गवाह पेश नहीं किया गया था। अपीलार्थी की ओर से पेश विद्वान वरिष्ठ वकील ने अपने निवेदन को पुष्ट करने के लिए निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया हैः

- मुन्ना पांडे बनाम बिहार राज्य, एयर 2023 सर्वोच्च न्यायालय 5709।
- अकील बनाम राज्य (दिल्ली का राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र), (2013) 7 एस. सी. सी. 125।
- साक्षी बनाम भारत संघ, (2004) 5 एस. सी. सी. 518।

- महाराष्ट्र राज्य बनाम महेश करीमन तिर्की, (2022) 10 एससीसी 207।

- प्रदीप एस. वोडेयार बनाम कर्नाटक राज्य, (2021) 19 एससीसी 62।

**स्वयं जवाबदेह के बारे में सुझाव**

54. इसके विपरीत, श्री सी. यू. सिंह, उच्च न्यायालय की ओर से पेश वरिष्ठ वकील और अभियुक्त ने प्रस्तुत किया कि स्वीकार है कि गंभीर प्रक्रियात्मक उल्लंघन हैं। अदालत के समक्ष पूर्वाग्रह का पर्याप्त प्रदर्शन किया गया था। एक न्यायाधीश के लिए इतने कम समय में निर्णय देना असंभव होगा। हर चरण में कोई अवसर नहीं दिया गया था। अभियुक्त पर मुकदमा चलाया जाए। यह एक स्पष्ट मामला है "जल्दबाजी में न्याय न्याय है दफन न्याय अपीलार्थी, न्यायिक अधिकारी को अवसर देने का कोई सवाल ही नहीं है, क्योंकि उसके खिलाफ कोई कार्रवाई लंबित नहीं है। किसी भी मामले में, आरोपी अभी भी जेल में है।

**चर्चा**

55. गौर करने पर, हम पाते हैं कि उच्च न्यायालय ने दोनों विवादित निर्णयों को पारित करते समय, न केवल अभिलेखों की मांग की है और तथ्य के निष्कर्ष प्रस्तुत किए हैं, बल्कि उन पर विस्तार से विचार भी किया है। हर स्तर पर, अभियुक्त को अपना बचाव करने के लिए उचित अवसर से वंचित कर दिया गया। अपीलार्थी न्यायिक अधिकारी स्पष्ट रूप से अत्यधिक जल्दबाजी में काम कर रहा था। प्रत्येक मुकदमा सच्चाई की ओर एक यात्रा है और एक पीठासीन अधिकारी से अभियोजन और बचाव पक्ष के दिमाग में एक संतुलित वातावरण बनाने की उम्मीद की जाती है। हमें ऐसा लगता है कि यह निर्णय बहुत जल्दबाजी में लिया गया था। 27 पृष्ठों में चलने वाले आधे घंटे के समय के भीतर निर्णय देना मानवीय रूप से असंभव होगा जिसमें पहले

मामले में 59 पैराग्राफ होंगे और दूसरे में भी इसी तरह। बचाव पक्ष का वकील अदालत के खिलाफ नहीं लड़ सकता है। यह अदालत है जिसे एक संतुलित दृष्टिकोण का पालन करना होता है। आरोप तय करने सहित हर स्तर पर उचित अवसर और सुनवाई से लगातार इनकार किया जाता था। अभियुक्त अपने वकील से परामर्श करने में सक्षम नहीं था। उन्हें प्रतियां भी नहीं दी गईं, हालांकि उनके वकील ने 88 को तैयार करने से पहले वही प्राप्त किया था। शुल्क लेते हैं। उनके वकील द्वारा दस्तावेज़ प्राप्त करना पर्याप्त अनुपालन नहीं होगा, जब तक कि उन्हें उनका अध्ययन करने और उसके बाद परामर्श करने के लिए पर्याप्त समय नहीं दिया जाता। मान लीजिए, न तो गवाह संरक्षण योजना, 2018 के प्रावधानों को लागू किया गया है और न ही न्यायालयों के लिए वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के नियमों, 2020 का पालन किया गया है। अभियुक्त को केवल अदालत की कार्यवाही दिखाई गई और दीवार पर उसके लिए लिखा हुआ था। हम मामले के गुण-दोष पर कुछ भी कहने को तैयार नहीं हैं। तथ्यों पर, 2023 की आपराधिक अपील संख्या 3925 में भी, मुकदमा एक ही दिन में शुरू और समाप्त हो गया था। इसके अतिरिक्त, अभियुक्त द्वारा किसी भी वकील को नियुक्त नहीं किया जा सकता था और इसलिए, अभियोजक की सिफारिशों के अनुसार, दूसरे को नियुक्त किया गया था। अन्यथा, दोनों मामलों में तथ्य कमोबेश समान हैं और इसलिए, हम इसमें विस्तार से जाने के लिए इच्छुक नहीं हैं। जब आरोप बहुत गंभीर होते हैं, तो अदालतों को अपने गंभीर कर्तव्य का निर्वहन करने में अधिक सावधानी बरतनी चाहिए।

56. हमें नहीं लगता कि अपीलार्थी के विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा जिन निर्णयों पर भरोसा किया गया है, उनका वर्तमान मामले पर कोई प्रभाव है। अपीलार्थी न्यायिक अधिकारी भाग्यशाली है कि उसके खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की गई। हम इस पर और कुछ नहीं कहना चाहते हैं, सिवाय यह कहने के कि किसी भी प्रस्तावित कार्रवाई

के अभाव में, अपीलार्थी को सुनने का कोई सवाल ही नहीं है। इस प्रकार, हम मामले के गुण-दोष पर हस्तक्षेप करने के लिए इच्छुक नहीं हैं। अनिवार्य प्रावधानों का पालन न करने के संबंध में, क्योंकि अभियुक्त अभी भी कारावास में है।

57. प्रशासनिक पक्ष से की गई कार्रवाई पर हस्तक्षेप की मांग करने वाले आवेदन पर, अपीलार्थी को उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाना है। यह एक प्रशासनिक कार्रवाई है और इसलिए, विशेष रूप से ऊपर की गई चर्चा के आलोक में, हमारे द्वारा न्यायिक पक्ष में किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। यह कहना पर्याप्त है कि अपीलार्थी को प्रशासनिक पक्ष से उच्च न्यायालय जाने की स्वतंत्रता दी गई है।

58. पूर्वगामी कारणों से, अपीलें निम्नलिखित निर्देशों के साथ खारिज की जाती हैंः

(1.) निचली अदालत पीड़ित के साक्ष्य को दर्ज करते समय पॉक्सो अधिनियम, 2012 के आदेश को ध्यान में रखेगी।

(2.) निचली अदालत पॉक्सो अधिनियम, 2012 की धारा 35 को ध्यान में रखते हुए मुकदमे का संचालन करेगी और उसे तेजी से पूरा करेगी।

(3.) भारत सरकार का प्रतिनिधित्व कानून और न्याय मंत्रालय के सचिव द्वारा किया जाएगा, जो आज से छह महीने की अवधि के भीतर एक व्यापक सजा नीति और उस पर एक रिपोर्ट पेश करने की व्यवहार्यता पर एक हलफनामा दायर करेगा, जैसा कि ऊपर बताया गया है।

(4.) रजिस्ट्री इस फैसले की एक प्रति न्याय विभाग, विधि और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार को भेजेगी।

59. नतीजतन, आई. ए. सं. 29814/2023 खारिज हो जाता है।

60. लंबित आवेदनों की अनुमति है।

**.....न्यायमूर्ति (एम. एम. सुंदरेश)**

**.....न्यायमूर्ति (एस. वी. एन. भाटी)**

नई दिल्ली;

17 मई, 2024

**खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।**